ओ३म्

आर्य जगत्

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

रविवार,23 जून 2013 | आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक पत्र | सप्ताह रविवार 23 जून, 2013 से 29 जून, 2013

ज्ये. शु.–15 ● वि० सं०–2070 ● वर्ष 77, अंक 61, प्रत्येक मगंलवार को प्रकाश्य, दयानन्दाब्द 190 ● सृष्टि–संवत् 1,96,08,53,113 ● इस अंक का मूल्य – 2.00 रुपये

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा का वार्षिक अधिवेशन सम्पन्न

श्री पूनम सूरी सर्वसम्मति से पुनः प्रधान चुने गये

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा का वार्षिक अधिवेशन दिनांक 26–05–2013 को आर्य समाज (अनारकली) मन्दिर मार्ग, नई दिल्ली के सभागार में माननीय श्री पूनम सूरी जी की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ जिसमें अनेक राज्यों से आए प्रतिनिधियों ने भाग लिया।

वर्ष 2013–14 के लिए पदाधिकारियों का चुनाव सर्वसम्मति से नियुक्त निर्वाचन अधिकारी ब्रि0 ए. के. अदलखा और श्रीमती निशा पेशिन द्वारा करवाया गया। चुनाव प्रक्रिया सम्पन्न होने पर चुनाव अधिकारी ने श्री पूनम सूरी जी को प्रधान, श्री प्रबोध महाजन जी को उपप्रधान, श्री एस के शर्मा जी को मन्त्री, श्री सत्यपाल आर्य जी को सहमन्त्री, श्री बल्देव जिन्दल जी को कोषाध्यक्ष एवं श्री कीमती लाल जी को पुस्तकालयाध्यक्ष निर्वाचित घोषित किया गया। नवनिर्वाचित प्रधान माननीय श्री पूनम सूरी जी को सर्वसम्मति से अधिकार दिया गया कि वे शेष अधिकारियों, अन्तरंग सभा के सदस्यों तथा डीएवी कॉलेज प्रबन्धर्त्री समिति पर भेजे जाने वाले प्रतिनिधियों का स्वयं मनोनयन करें। मान्य प्रधान जी ने सदन की भावनाओं का विनम्रता पूर्वक धन्यवाद किया लेकिन चुनाव के लिए सदन के समक्ष अन्तरंग सभा के सदस्यों के नामों का प्रस्ताव रखा। उपस्थित प्रतिनिधियों ने करतल ध्वनि से इस प्रस्ताव को स्वीकार किया और अन्तरंग सभा को निर्वाचित घोषित किया गया। डीएवी कॉलेज प्रबन्धकर्त्री समिति के लिये प्रतिनिधियों के नामों का प्रस्ताव भी प्रधान जी ने सदन के सामने रखा जिसे सर्वसम्मति से स्वीकार किया गया।

अन्त में माननीय प्रधान जी सभी भी पधारे हुए प्रतिनिधियों को सम्बोधित करते हुए कहा कि आपने मेरी जो पीठ थप–थपाई है, इसके लिये मैं आप सबका धन्यवाद प्रकट करता हूँ। राम पाल के बारे में जो बात उठी, मैं उसे आचार्य नहीं कहूंगा। वह जो कर रहे हैं, ठीक नहीं कर रहे हैं। उन्होंने आर्यों की भावनाओं को ठेस पहुंचाई है। हमें अपना आग्रह सरकार तक पहुंचाना होगा। इसके साथ ही हमें इसका कानूनी हल निकालना होगा। उनकी इन अनर्गल बातों से आर्यों को चोटें पहुंची हैं, उसके लिए हम निंदा करते हैं। किसी की भावनाओं को ठेस पहुंचाना संविधान के खिलाफ है। हमें सभी सांसदों, राष्ट्रपति एवं हरियाणा के विधायकों को इसके खिलाफ ज्ञापन देना चाहिए।

श्री विश्वनाथ जी के पिताजी शहीद राजपाल जी ने एक पुस्तक लिखी थी "रंगीला रसूल" जिसके लिये एक मुसलमान ने उनका कत्ल कर दिया था। अब पाकिस्तान सरकार उस कातिल को सम्मानित कर रही है। हमें राजनैतिक स्तर पर इसका भी विरोध करना चाहिए।

आर्य समाजों में होने वाले विवाहों को लेकर प्रधान जी ने बताया कि हम उन्हीं वरवधु की शादी करायेंगे जिनके माता–पिता शादी में सम्मिलित होंगे। श्री सूरी जी ने कहा आत्मा की उन्नति करना आर्य समाज का छठां नियम है। हम स्वयं आर्य बनेंगे तभी दुनिया को आर्य बनायेंगे। गायत्री मन्त्र पर अपने विचार रखते हुए अपनी भावनायें विस्तृत रूप से प्रकट की गई।?

अधिवेशन के आरम्भ में सभा का वार्षिक विवरण प्रस्तुत किया गया जिसे सर्वसम्मति से सम्पुष्टि की गई। पारित किया गया। वर्ष 2013–2014 का सभा का वार्षिक बजट भी प्रस्तुत किया गया, जिससे सर्वसम्मति से पारित किया गया। सभा में उपस्थित प्रतिनिधियों से सुझाव मांगे गये। प्रतिनिधियों ने आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा के नेतृत्व में विश्वास जताते हुए अपनी अपनी आर्य समाजों की गतिविधियों का विवरण दिया।

श्री अनिल गुप्ता (अम्बाला), श्री अरुण गुप्ता (बाजार सीताराम), श्री डॉ. वीरेन्द्र वेदालंकार (चण्डीगढ़) कै0 लखीराम (दादुपुर), श्री मामचन्द रिवारिया (दिल्ली), श्री अजय एलाहाबादी (हिसार) श्री कश्मीरी लाल, श्री एस पी सहदेव (जालन्धर) श्री गुल्शन चांदना (अम्बाला) श्री धीरेन्द्र उप्पल (हिसार) श्रीमती जे. काकरिया (प्रधान, उपसभा हिमाचल प्रदेश) श्री डॉ. वी. सिंह (प्रधान, उपसभा उत्तर प्रदेश) श्रीमती नीलम कामरा (प्रधान, उपसभा पंजाब) आदि ने अपने सुझाव रखें। समयाभाव के कारण अन्य प्रतिनिधियों से यह कहा गया कि वे अपने सुझाव लिख कर भिजवायें। अन्त में शान्ति पाठ के साथ अधिवेशन की कार्यवाही समाप्त हुई।

स्वजातीय या विजातीय ईश्वर अथवा अपने आत्मा में तत्त्वान्तर वस्तुओं से रहित एक होने से वह 'अद्वैत' है। – स. प्र. समु. १

संपादक – श्री पूनम सूरी

ओ३म्
आर्य जगत्
सप्ताह रविवार 23 जून, 2013 से 29 जून, 2013

जय हो उसकी

● डॉ. रामनाथ वेदालंकार

महाँ इन्द्रः परश्च नु, महित्वमस्तु वज्रिणे।
द्यौर्न प्रथिना शवः ।। ऋग् 1.8.5

ऋषिः **मधुच्छन्दा वैश्वामित्रः**। देवता **इन्द्रः**। छन्दः **गायत्री**।

● (**इन्द्रः**) ऐश्वर्यशाली परमेश्वर (**महान्**) महान् [है], (**च**) और (**नु**) निश्चय ही (**परः**) सर्वोत्कृष्ट [है] (**वज्रिणे**) [उस] वज्रधारी का (**महित्वं**) महत्त्व, जयजयकार (**अस्तु**) हो। [उसका] (शवः) बल (**प्रथिना**) विस्तार और यश से (**द्यौः न**) द्युलोक के समान [है]।

● भाइयो! क्या तुम विश्व–सम्राट् इन्द्र का परिचय जानना चाहते हो? सुनो, वेद उसका परिचय दे रहा है। इन्द्र महान् है, महामहिम है, इस जगतीतल के बड़े से बड़े महिमाशालियों से भी अधिक महिमाशाली है। उसकी महिमा के सम्मुख सूर्य, चाँद, सितारे, नदी, पर्वत, सागर, चक्षु, श्रोत्र, वाक् मन सब तुच्छ है। वह 'पर' है, परम है, सर्वोत्कृष्ट है, इसलिए परामात्मा, परात्मा, परमेश्वर, परमदेव, परात्पर आदि नामों से स्मरण किया जाता है। सर्वोत्कृष्ट होने के कारण ही वह संसार में सबसे अधिक स्पृहणीय है, क्योंकि जो वस्तु जितनी अधिक उत्कृष्ट है, उसे हम उतना ही अधिक पाना चाहते हैं। निकृष्ट या घटिया वस्तु हमारे मन को नहीं भाती। इन्द्र–प्रभु परमोत्कृष्ट होने के कारण हमारा मन–भावन होने योग्य है, हमारी अभीप्सा का पात्र होने योग्य है।

उसके बल, विस्तार और यश का हम क्या बखान करें! कोई सांसारिक वस्तु उसका उपमान नहीं बन सकती, क्योंकि उपमान उपमेय से उत्कृष्ट हुआ करता है, जबकि संसार की कोई वस्तु किसी गुण में उससे उत्कृष्ट नहीं है। फिर भी परस्पर समझने और समझाने के लिए हम कह सकते हैं कि इन्द्र के बल का विस्तार और यश, द्युलोक के समान है। ज्यों ही हम द्युलोक के बल पर दृष्टि डालते हैं, हमारी आँखें चौंधिया जाती हैं। देखो, द्युलोक के सूर्य को देखो! सूर्य का बल इतना व्यापक है कि उसने ग्रहोपग्रहों सहित हमारे सारे सौर–मंडल को अपनी आर्कषणशक्ति रूप डोर से बाँध रखा है। उसने अपने प्रकाश से सबको प्रकाशित कर रखा है, अन्यथा हमारी भूमि और अन्य ग्रहोपग्रह सब चिर अन्धकार में विलिन हो जाएँ। सूर्य तो द्युलोक का एक सदस्यमात्र है। द्युलोक में अन्य अनेक नक्षत्र–पुंज भी है, जिनके बल, विस्तार और यश के आगे तो हमारी बुद्धि चकरा जाती है। वे सब अपने–आपमें एक–एक सूर्य हैं और वैज्ञानिकों का कथन है कि उनके भी अपने–अपने ग्रहोपग्रह हैं, जिनका वे संचालन और व्यवस्थापन करते हैं। तो, उस द्युलोक के समान विस्तीर्ण एवं यशस्वी इन्द्र का बल है।

वह इन्द्र वज्रधर भी है, पापात्माओं को उनके कर्मों के अनुरूप दण्ड देनेवाला है। यदि हम उसकी दण्ड–शक्ति का मन में ध्यान कर लें, तो जीवन में होनेवाली सब उच्छृङ्खलताओं और अविवेकमय आचरणों से उद्धार पालें। आओ, महिमागान करें जगत् के उस परम यशस्वी सम्राट् इन्द्र का। आओ, जय–जयकार करें उस वज्रधारी का।

❑

वेद मंजरी से

इस अंक में प्रकाशित सभी लेखों में व्यक्त भावों व विचारों के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं और इसमें किसी आपत्तिजनक बात के लिए 'सम्पादक' एवं 'आर्य जगत्' उत्तरदायी नहीं होगा।

घोर घने जंगल में

● महात्मा आनन्द स्वामी

पिछले अंक में हमने पढ़ा कि कैसे व्यक्ति बुरी संगत में पड़कर सर्वनाश के मार्ग पर चल पड़ता है। यौवन में अपनी इन्द्रियों की शक्ति का सद्प्रयोग कर सन्मार्ग पर जा सकता है।

स्वामी जी ने कहा समाधि की अवस्था में पहुँचने के लिए घर–बार, संसार, परिवार का मोह छोड़ देना पड़ता है। व्यक्ति का सच्ची माता, पिता और मित्र तो वह परमात्मा ही है। महाराज मिलिन्द और आचार्य नागार्जुन का संवाद सुनाकर कहा कि रूप और गुण बदल जायें तो वस्तु का नाम भी बदल जाता है जैसे दूध से दही। लेकिन जो सदा एक–सा रहता है उसे आत्मा कहते हैं। संसार का मोह एक गलतफहमी है। जिनका हम मोह करते हैं उनका प्यार, लगाव तो किसी न किसी कारण (स्वार्थ) से है। महात्मा जी ने प्रसंग सुनाया जिसमे सन्यासी द्वारा अपने शिष्य को मृत्यु का नाटक करने को कहा गया और सिद्ध किया कि माता, पिता, पत्नी सभी व्यक्ति के मृतशरीर को तत्काल घर से निकाल बाहर करना चाहते हैं, ये वही भाई–बान्धव हैं व्यक्ति जिनके लिए 'समाधि' का रत्न भी खो देना चाहता है।

अब आगे.....

ओ३म् त्वं हि नः पिता वसो त्वं माता शतक्रतो बभूविथ। अधा ते सुम्नमीमहे।।

विद्वन्मण्डल, मेरी प्यारी माताओ और सज्जनो!

कल मैं युवक की बात सुना रहा था। साधु के कहने पर किसी ने विष नहीं पिया तो महात्मा ने स्वयं ही विष पी लिया। उसमें विष तो था नहीं, थी केवल मिश्री। महात्मा को कुछ हुआ नहीं। युवक अपने प्राणों को ब्रह्मरन्ध्र में पहुँचाकर लाश की भाँति पड़ा था। उन प्राणों को नीचे उतारकर उठ बैठा।

गुरु ने पूछा, "क्यों युवक! देखा तूने कि ये सब लोग तुझे कितना प्यार करते हैं, तेरे लिए कितने प्राण देते हैं?"

युवक ने कहा, "हाँ गुरुदेव! देख लिया सब–कुछ। मेरी आँखें बन्द थीं परन्तु मेरे कान प्रत्येक बात सुन रहे थे। पहले तरस आया इन लोगों पर कि मैं इन्हें धोखा देता हूँ। इनका रोना सुनकर, इनकी चीखें सुनकर जी में आया कि उठ बैठूँ और कहूँ कि मैं मरा नहीं, परन्तु मन को दृढ़ करके मैं लेटा रहा। जब माँ ने कहा, पिता ने कहा, पत्नी ने कहा कि वे सब मेरे लिए जान देना चाहते हैं, स्वयं मरने को तैयार हैं कि मैं जी उठूँ, तो मैं समझा कि आप जो कुछ कहते थे वह गलत था; परन्तु अब समझा हूँ गुरुदेव कि इनमें से कोई भी मुझे प्यार नहीं करता। ये अपने लिए रो रहे थें। अपने लिए चीख रहे थे। मेरे लिए कोई भी मरने को तैयार नहीं हुआ। ये सब स्वार्थ के साथी हैं। मेरा साथी केवल वह है जिसे मैं इनके लिए भूला बैठा था।"

यह है इस मोह की वास्तविकता जिसके वश में होकर यह संसार उलटे मार्ग पर बढ़ा जाता है। प्रत्येक स्थान पर स्वार्थ, प्रत्येक स्थान पर भौतिकता, मायावाद, सर्वत्र इस शरीर की चिन्ता अथवा उन लोगों की चिन्ता जिनका सम्बन्ध इस शरीर से है।

परन्तु देखो भाई! मन को दृढ़ बनाने और उसे सुमार्ग पर चलाने के लिए अभी केवल दो ही बातें कह पाया–एक यह कि सत्संगी बन, दूसरी यह कि तपस्वी बन, और कथा का केवल एक दिन शेष है; अभी मुझे बहुत–कुछ कहना है। एक अन्तिम बात कहकर इस विषय को समाप्त करूँगा। यह मन सरलता से वश में नहीं आता–

बाजीगर का बांदरा, ऐसा मन पहचान।
बाँध रखो तो खेल है, नाहीं आफत जान ।।

तमाशा दिखानेवाला बाज़ीगर अपने बन्दर को लेकर नाना प्रकार के खेल दिखाता है। उसके एक हाथ में लाठी है, दूसरे में वह रस्सी जिसका परला सिरा बन्दर के गले में बँधा है। वह दोनों की सहायता से बन्दर को भाँति–भाँति के नाच नचाता है, अपनी जीविका भी कमाता है, बन्दर का पेट भी पालता है, दूसरों का मन भी प्रसन्न करता है। यह मन का बन्दर थकता नहीं। ऊपर–नीचे, पूर्व–पश्चिम, इधर–उधर भागता ही फिरता है, परन्तु तब तक करता है यह खेल जब तक उसके गले में बँधी रस्सी बाज़ीगर के हाथ में है। इसलिए बाबा–

बाँध रखो तो खेल।

खेलने दो इसे, परन्तु बाँधकर रक्खो। वश में रक्खो, फिर यह तुम्हारी इच्छानुसार खेल दिखायेगा। यदि यह रस्सी टूट गई, यदि यह बन्दर छूट गया तो? प्राणों के लिए संकट। यह छूटा हुआ मन खेल नहीं दिखायेगा। यह विनाश करेगा। यह दूसरों को प्रसन्न नहीं करेगा, उनके कपड़े फाड़ देगा, उनके मुख नोच लेगा। जीविका पैदा नहीं करेगा, मुकद्दमे पैदा करेगा–

मन के मरे ही जानिये, साधु सन्त सुजान।
नाहें तो या जगत् में, धूरत खल शैतान।।

केवल वेश बदलने से कोई साधु नहीं होता, मन को वश में करने से होता है। यदि मन वश में नहीं, तुम्हारे अन्दर बैठी हुई यह महा–शक्ति, यह 'एटॉमिक पावर' से भी बड़ी शक्ति अधिकार से बाहर हो गई तो फिर 'साधु सन्त सुजान' नहीं मेरे भाई! 'धूर्त खल शैतान' बन जाता है, व्यक्ति पशु बन सकता है, नरक

में गिर सकता है। सुख का मार्ग कभी उसके लिए खुलता नहीं।

कोटि जतन कर कोई।
मन जीते बिन साधजन जीवन नरक समान।।

तुम संसार को जीतना चाहते हो तो जीत लो, मेरे भाई! तुमसे पूर्व सिकन्दर और चंगेज़, हलाकू और हिटलर ने यह प्रयत्न किया था। तुम भी यह प्रयत्न करके देख लो। तुम इस संसार से परे इस विश्व को जीतना चाहते हो तो बनाओ रॉकेट; बनाओ अन्तरिक्ष–यान; पहुँचो चाँद और मंगल में, बुध और वृहस्पति में। प्रयत्न करके इस सौरमण्डल से भी बाहर चले जाओ। इसकी थाह कभी किसी को मिली नहीं, तुमको भी नहीं मिलेगी, परन्तु आगे बढ़ो। एक दिन भारत के वैज्ञानिकों ने, जो सात प्रकार के वायुयान बनाना जानते थे (तुम तो अभी केवल तीन प्रकार के ही बना सकते हो), यह प्रयत्न किया था। तुम भी यह प्रयत्न करके देख लो। परन्तु स्मरण रक्खो, जब तक मन वश में नहीं, तब तक कहीं भी सुख मिलेगा नहीं। यदि इन बातों से सुख और शान्ति मिल सकती तो आज अमेरिकावाले भयभीत होकर पागलों–जैसी बातें न करते। रूसवाले विनाश का आह्वान न करते। यह सुख और शान्ति का मार्ग नहीं है। सच्चे सुख का मार्ग है यह कि मन को वश में रक्खो। इसके लिए आपको दो बातें कह चुका– 1. सत्संगी बन, 2. तपस्वी बन। अब तीसरी बात कहता हूँ–मनुष्य बन!

आप कहेंगे यह क्या बात हुई? मनुष्य तो हम हैं, और कैसे बनें? परन्तु देखो, मनुष्यता का अर्थ केवल यह शरीर और चोला नहीं है। भयानक–से–भयानक डाकू, हत्यारे, क्रूर, अन्यायी और कसाई, दूसरों के घरों में आग लगानेवाले, दूसरों की बहू–बेटियों को उठानेवाले, निर्बल, निर्दोष, फूल–जैसे बच्चों को तीरों से बींधनेवाले, अनाथों और विधवाओं का धन लूटनेवाले, निर्धन को पीसकर उसके परिश्रम पर निर्वाह करने और उसे दर–दर का भिखारी बनानेवाले, गाय के गले पर छुरी चलानेवाले, देशद्रोह करनेवाले, रुपये के लिए अपने माता, पिता, भाई और बच्चों को विष देनेवाले भी तो इसी चोले में हैं! इसी दो पाँव, दो हाथ, दो आँख, दो कान, नाक और मुँहवाले शरीर में होते हैं। क्या उन्हें हम मनुष्य कह सकते हैं? धर्म के नाम पर, आध्यात्मिकता के नाम पर, योग के नाम पर दूसरों को धोखा देनेवाले भी तो इसी शरीर में रहते हैं, उन्हें मनुष्य कहना क्या मनुष्यता का अपमान नहीं?

'देवेभिर्मानुषे जने'

ऐसा सामवेद का वचन है। देवता का, परमात्मा का निवास कहाँ है? उसके पास जिसके हृदय में मानवता है, जिसमें वे गुण विद्यमान हैं जिनसे मानव बनता है। नहीं तो मनुष्य और पशु में क्या अन्तर है? मनुष्य बनकर प्रजापति की आज्ञा पूर्ण होती है। प्रजापति की पदवी मिलती है। प्रभु के दर्शन भी होते हैं। हमारे शास्त्रों ने मनुष्यों को बहुत बड़ा स्थान दिया है। उसे प्राणियों में सबसे श्रेष्ठ कहा गया है। दूसरे लोगों ने मनुष्य को सर्वश्रेष्ठ बहुत पीछे कहा, हमारे ऋषियों ने उपनिषदों का सन्देश देते समय लाखों वर्ष पूर्व कहा–

गुह्यं ब्रह्म तदिदं ब्रवीमि नहि मानुषात्
श्रेष्ठतरं हि किंचित्।

'देख, तुझे एक रहस्य बताता हूँ– मनुष्य से बढ़कर संसार में और कुछ भी श्रेष्ठ नहीं। सबसे ज्येष्ठ, सबसे श्रेष्ठ यह है।' परन्तु यह मनुष्य कौन है? केवल वह नहीं जिसने मानव–चोले को धारण कर लिया परन्तु इसके मूल्य को नहीं समझा और अपने तथा दूसरों के विनाश के लिए यत्न आरम्भ कर दिया। नहीं, वह मनुष्य नहीं। और आज के संसार का सबसे बड़ा रोग यह है कि मनुष्य मनुष्य नहीं रहा।

आप जो यहाँ बैठे हैं, आप तो मनुष्य हैं, आपकी बात मैं नहीं कहता, दूसरों की बात कहता हूँ। ऐसा प्रतीत होता है कि मानवता–रूपी पक्षी पंख लगाकर दूसरे किसी लोक में चला गया है। ऐसा न होता तो ये संसार वाले रोते, तड़पते, चिल्लाते क्यों फिरते? हमारे देवता–जैसे प्रधानमंत्री नेहरू जी की दर्दभरी अपीलें और प्रयत्न बहरे कानों पर क्यों पड़ते? नेहरू जी सच्चे हृदय से, लोक–कल्याण की भावना से कहते हैं–ये ऐटम और हाइड्रोजन बम समाप्त कर दो! और कुछ नहीं कर सकते तो इनके परीक्षण ही बन्द कर दो! परन्तु कौन सुनता है? इधर अमेरिका कहता है, हम युद्ध के लिए तैयार हैं।

अरे भाई, युद्ध के लिए तैयार हो तो लड़ते क्यों नहीं? लड़ो एक बार। यह प्रतिदिन का झगड़ा तो समाप्त हो। परन्तु नहीं, ये लड़ना भी नहीं चाहते। दोनों एक–दूसरे के भय से अधमरे हुए जाते हैं। दोनों सोचते हैं– दूसरे के पास कहीं अधिक हथियार न हों। आँखें भी दिखाते हैं, डरते भी हैं। महानाश से घबराते भी हैं, उसकी तैयारी भी कर रहे हैं। ये क्या मानव हैं?

यह डरा हुआ पशु, यह दाँत दिखाता हुआ भेड़िया, यह भय के करण फन फैलाये हुए साँप, यदि ये मनुष्य हैं तो पशु कौन है?

और हम महानाश की तैयारी की चर्चा करते हैं न? वह कहानी या कल्पना नहीं। यदि मनुष्य मनुष्य न बना तो याद रक्खो, यह महानाश आयेगा अवश्य। प्रसिद्ध पाश्चात्य वैज्ञानिक श्री आइनस्टाइन हुए हैं न? जिस परमाणु शक्ति की आज बहुत चर्चा है उसकी खोज में उनक बहुत बड़ा हाथ था। वे पैदा हुए जर्मनी में। दूसरे महायुद्ध के समय वहाँ से भागकर अमेरिका जा पहुँचे। वहाँ उन्होंने पहले ऐटम बम को जन्म दिया। उनसे एक बार किसी ने पूछा, "आप इतने बड़े विद्वान् हैं, इतने बड़े वैज्ञानिक हैं। यह बताइये कि तीसरे युद्ध में कौन–कौन–से हथियार प्रयुक्त होंगे?"

आइनस्टाइन ने सोचते हुए कहा, "तीसरे महायुद्ध की बात मैं कह नहीं सकता। परन्तु जो चौथा महायुद्ध होगा उसमें लोग ईंटों, पत्थरों, लाठियों, दाँतों और नाखूनों से लड़ेंगे क्योंकि कोई भी हथियार उस समय रहेगा नहीं। सब–कुछ समाप्त हो जायेगा।"

यह है उस महानाश की झलक जिसकी ओर यह संसार तीव्र गति से बढ़ता जाता है। दूसरे महायुद्ध के समय जर्मनी में एक नगर था 'कोलोन'। शायद अब भी इस नाम का कोई नगर हो परन्तु हिटलर की जर्मनी में कोलोन का जो नगर था, वह अब कहीं नहीं। उस समय वह जर्मनी का सबसे बड़ा शिल्प–केन्द्र था। बड़े–बड़े टैंक, बड़े–बड़े वायुयान, बड़े–बड़े रॉकेट और बड़े–बड़े बम वहाँ तैयार हुए थे। बड़े–बड़े कारखाने वहाँ काम कर रहे थे। प्रत्येक कारखाने में सहों मजदूर काम करते थे। उसके मकान, दुकानें, होटल, रेस्तराँ, क्लबें, सिनेमाघर, नाचघर और थियेटर हर समय खचाखच भरे रहते थे। जर्मनी के शत्रुओं ने जब देखा कि उनको नष्ट करने के लिए बहुत–से हथियार यहाँ तैयार होते हैं तो एक दिन उन्होंने निश्चय किया कि वे इस नगर को ही समाप्त कर देंगे। एक सहस्र बम बरसानेवाले वायुयान इसके लिए तैयार किये गए। इधर आधी रात हुई, उधर संकेत हुआ। बरतानिया से दस्ते के दस्ते बनकर ये यान उड़े, कोलोन के ऊपर पहुँचे और बम गिराने लगे। एक टुकड़ी बम गिरा देती तो दूसरी पहुँच जाती, दूसरी गिरा देती तो तीसरी पहुँच जाती, एक–एक यान ने रात में कई–कई चक्कर लगाए। वे बरतानिया से उड़ते, कोलोन पहुँचते, बमों का बोझ हल्का करते और नये बम लेने के लिए वापस बरतानिया पहुँच जाते। एक रात में इस अभागे नगर पर एक सहस्र टन वज़न के बम गिराये गए। परिणाम यह हुआ कि प्रातःकाल का प्रकाश हुआ तो कोलोन नगर समाप्त हो चुका था। प्रति ओर खंडहर और लाशें, प्रति ओर सिसकते हुए मरते हुए लोग, जलते हुए भवन। जर्मनी का सबसे बड़ा शिल्प–केन्द्र एक जलता हुआ श्मशान बन गया और वह सब–कुछ केवल एक सहस्र टन बारूद से हुआ।

परन्तु यह तो पुरानी बात हो चुकी। बहुत बड़ा विनाश था यह। परन्तु आज हाइड्रोजन बम विद्यमान हैं। इनमें यह शक्ति है कि उस एक सहस्र टन बारूद से, जो एक सहस्र वायुयानों ने रात के बारह घण्टों में गिराया, पाँच सहस्र गुणा विनाश एक क्षण में उत्पन्न कर दें, अर्थात् एक सहस्र वायुयान किसी नगर पर हर रात एक सहस्र टन बारूद के बम गिरायें और लगातार चौदह वर्ष तक गिराते रहें तो इस नगर में जो विनाश होगा इतना एक हाइड्रोजन बम से एक क्षण में हो जायेगा।

परन्तु यह भी तो पुरानी बात है। मैं उस हाइड्रोजन बम की बात करता हूँ जो पहले–पहल बनाया गया था और जिसका परीक्षण अमेरिकावालों ने प्रशान्त महासागर में किया था। उसके पश्चात् भी प्रगति रुक नहीं गई। पूरी शक्ति और लगन से ये लोग आगे बढ़ रहे हैं। अब दस मेगाटन के, बीस मेगाटन के, पचास मेगाटन के और सौ मेगाटन के बम भी बन गये हैं। एक मेगाटन का अर्थ है दस लाख टन। दस लाख का अर्थ है एक करोड़ टन, बीस का अर्थ है दो करोड़ टन, पचास का पाँच करोड़, सौ का दस करोड़ और अब रूसवाले घोषणा कर रहे हैं कि उनके पास दस करोड़ टन की शक्ति से भी बड़े बम विद्यमान हैं।

अच्छी बात है भाई! दस करोड़ टन से संतोष नहीं होता तो अरब और खरब टन के बम बनाओ, परन्तु यह भी तो सोचो कि इनका करोगे क्या? ये सब–के–सब चलेंगे तब संसार कहाँ रहेगा?

परन्तु अब तो यह भी पुरानी बात हो गई। अब रॉकेट बन रहे हैं। बड़े रॉकेट, उनसे बड़े रॉकेट, उनसे भी बड़े रॉकेट। क्यों बन रहे हैं ये? इसीलिए कि रूसवाले अपने बमों को अमेरिका में, अमेरिकावाले अपने बमों को रूस में जल्दी–से–जल्दी पहुँचाकर गिरा सकें। बटन दबाने पर ये रॉकेट चलेंगे। पन्द्रह हज़ार मील प्रतिघंटा की गति से चलते हुए संसार पर विनाश की वर्षा करते जायेंगे।

करो यह वर्षा। मार डालो संसार को। परन्तु मत भूलो कि तुम भी संसार में रहते हो। संसार समाप्त होगा तो तुम भी मरोगे, बचोगे नहीं। यह विज्ञान की उन्नति नहीं, अवनति है। यह मानवता नहीं, पशुपन है। तुम आत्महत्या के मार्ग पर चले जाते हो–

दयारे–मग़रिब के रहनेवालो, खुदा की बस्ती दुकाँ नहीं है।

तुम भूलकर समझ बैठे हो कि यह हथियारों की, स्वार्थ की ओर विनाश की दुकान है। अरे! यह ईश्वर की बस्ती है। यह मानव–शरीर देवताओं की पुण्यभूमि है। तुमने इसे लोभ और लालच की दुकान बना डाला है। परन्तु स्मरण रक्खो–

दयारे–मग़रिब के रहनेवालो, खुदा की बस्ती दुकाँ नहीं है।
खरा जिसे तुम समझ रहे हो, वो अब ज़रे–कम अयार होगा।।
तुम्हारी तहज़ीब अपने खंजर से आप ही खुदकुशी करेगी।
जो शाख़े–नाजुक पै आशियाना बनेगा, नापायदार होगा।।

इक़बाल ने यह बात वर्षों पूर्व कही थी और आज ये लोग सचमुच आत्महत्या के मार्ग पर बढ़े जाते हैं। नेहरू जी कहते हैं, रुक जाओ। संसार का प्रत्येक समझदार व्यक्ति कहता है, रुक जाओ। परन्तु ये रुकते ही नहीं, आगे ही बढ़े जाते हैं उस विनाश की ओर, जहाँ ये स्वयं भी मरेंगे और अरबों दूसरे लोगों को भी मार देंगे। ऐसी परिस्थिति उत्पन्न करेंगे कि माँ अपने बीमार बच्चे को हृदय से लगाने के स्थान पर दूर भागेगी कि उसके शरीर में प्रविष्ट रेडियायी लहरें मेरे शरीर को न छू जायँ। यह आत्महत्या का मार्ग नहीं तो क्या है?

और इस मार्ग को अपनाने का कारण क्या है? इक़बाल ने कहा था, 'जो शाख़े–नाजुक पै आशियाना बनेगा, नापायदार होगा।' वह कौन–सी शाख है जिसपर ये लोग घर बना बैठे हैं? यह शाख है मानवता का न होना। और यह मानवता क्या है? मनुष्य कौन है? हमारे शास्त्र इसका उत्तर देते हैं–

आत्मनः प्रतिकूलानि परेषान्न समाचरेत्।

'जो बात आपको अपने लिए अच्छी नहीं लगती उसको दूसरों के लिए मत कीजिये।' यह है मानवता!

शेष अगले अंक में....

मूर्ति पूजा वेद विरुद्ध

भागवत पुराण में भी मूर्तिपूजा का विरोध किया है

● अश्वनी कुमार पाठक

वेद संसार का सबसे पुराना ग्रंथ है। यह ईश्वरीय विज्ञान का ग्रंथ माना जाता है जो सृष्टि के आदि में लगभग 2 अरब वर्ष पहले ईश्वर ने चार ऋषियों द्वारा दिया था। इसलिए ईश्वर को गुरुओं का भी गुरु कहा गया है। सः गुरु नाम अपि गुरु। यजुर्वेद अध्याय 32 मंत्र तीन में कहा गया–

न तस्य प्रतिमा अस्ति यस्य नाम महद्यशः।
हिरण्यगर्भ इत्येश मामाहि
सादित्येषा यस्मान्न इन्येष।

अर्थात् उत्तम कीर्तियों के हेतु जो सत्य भाषण आदि कर्म हैं उनका करना ही जिसका नाम स्मरण कहलाता है, जो तेज़ वाले सूर्यादि लोकों की उत्पत्ति के कारण है, जो सबकी सभी प्रकार से रक्षा करता है तथा जो किसी माता–पिता के संजोग से उत्पन्न नहीं हुआ, न होता है, न होगा – उस परमेश्वर की कोई मूर्ति प्रतिमा नहीं है।

इस तरह वेदों में कई मंत्र हैं जो ईश्वर को निराकार बताते हैं। वेदों के बाद अन्य शास्त्रों में भी ईश्वर को निराकार ही माना गया है, अर्थात् जिसका कोई आकार नहीं है। वेद में एक भी ऐसा मंत्र नहीं है, जिसमें कहा गया हो कि ईश्वर ही इस प्रकार की मूर्ति बनाकर पूजा करनी चाहिए। वास्तव में निराकार ईश्वर की सृष्टि की रचना, पालन–पोषण और संहार कर सकता है। जो सर्वव्यापक और सर्वशक्तिमान होने से ही जीवों के अच्छे–बुरे कर्मों का फल देता है। भगवद्गीता में भी एक भी श्लोक ऐसा नहीं है जिसमें मूर्तिपूजा लिखी हो।

मूर्ति पूजा तो थोड़े समय से चली है। कोई भी मंदिर दो–ढाई हजार वर्ष से अधिक पुराना नहीं है। अपने आपको सनातन धर्मी कहने वाले लोग, जो मूर्ति पूजा करते हैं, उनके संत महात्मा वेदों की जगह भगवतादि पुराणों की कथा करते हैं। श्रीमद्भागवत पुराण के दो श्लोक मैं यहां प्रस्तुत कर रहा हूँ। उनमें भी मूर्तिपूजा का विरोध किया गया है। (10–84–11)

न ह्यम्मयानि तीर्थानि न देवा
साच्छेलयामयाः है तो पुनन्त्युरुकालेन
दर्शनादेव साधवः

अर्थात् जल में तीर्थ नहीं होते और मिट्टी या पत्थर की प्रतिमाएँ नहीं होतीं। ये दीर्घकाल तक पूजने से भी पवित्र नहीं बनाते। इसी संदर्भ में श्रीमद्भगवत पुराण 10–84–13 में देखें –

यस्यात्म–बुद्धिः कुणपे त्रि–धातुके
स्व–धीः कलत्रादिषु भौम इज्य–धीः।
यत्–तीर्थ–बुद्धिः सलिले न कर्हिचिज्
जनेष्व् अभिज्ञेषु स एव गो–खरः।।

अर्थात् वात पित्त कफ़ इन तीन धातुओं से बने देह में आत्माभिमान क्लत्रादिक में ममता मिट्टी काष्ठ पत्थर आदि की बनी हुई मूर्तियों में देवता बुद्धि और पानी में तीर्थ बुद्धि रखता है, वह मनुष्य होने पर भी पुरुषों में नीच गधा है।

इस प्रकार कई अन्य ग्रंथों में भी मूर्तिपूजा का विरोध किया गया है। महर्षि दयानन्द ने वेद के आधार पर ही मूर्तिपूजा का विरोध किया था। उनसे पहले हुए कई संत–महात्माओं ने मूर्तिपूजा का विरोध किया था। कुछ प्रमाण यहां लिख रहा हूँ। करोड़ों रुपए की आमदनी के कारण कोई इसे छोड़ना नहीं चाहता। भगवद्गीता में भी कोई श्लोक ऐसा नहीं है जिसमें किसी मूर्ति को पूजना लिखा हो

पत्थर पूजन हरि मिलै तो मैं पूजूं पहाड़।
उस पत्थर से तो चक्की भली पीस
खाय संसार।।

– (संत कबीर)

(1) जो पत्थर को माने देव।
बिरथा होवे उसकी सेव।।
(2) एको सिमरो नानका जल थल
रिहा समाई।
दूजो काहो सिमरिए जमें ते मर जाई।।

– (गुरु नानक)

दादू दुनिया बावरी मढ़िया पूजन ऊत।
आप मुए जग छोड़ गए बिन से माँगे पूत।।

– (संत दादू दयाल)

वास्तव में मनुष्य एक चेतन प्राणी है। जड़ वस्तुओं की पूजा करने से उसकी बुद्धि भी जड़ हो जाती है। मूर्तियां किसी की रक्षा नहीं करतीं। मंदिरों में आए दिन चोरियाँ होती रहती हैं। मूर्तिपूजक आतंकवादियों द्वारा भी मारे जाते हैं। योगाभ्यास से ही ईश्वर प्राप्ति हो सकती है। यह याद रखें। इसलिए मेरा यह सुझाव है कि सब लोगों को केवल मूर्तियों के दर्शन करने मंदिर में जाना चाहिए। इनसे प्रेरणा लेकर उन जैसे महान बनें। यही उनकी पूजा है। अधिकांश मूर्तियां तो हमारे महान पुरुषों श्रीराम, कृष्ण इत्यादि की ही है।

बी–4/256–सी,
केश्वपुरम, दिल्ली–110 035

एक फकीर के पास कुछ लोग पहुँचे, बताया यहाँ पर दो देशों की टीमें खेल रही हैं। एक का नाम 'भा' दूसरी का नाम 'पा' है, बताइए कौन सी टीम जीतेगी? फकीर सोच ही रहे थे कि इन्हीं लोगों में से किसी ने कह दिया–क्या 'भा' टीम जीतेगी, फकीर ने भी हामी भरते हुए कह दिया तुम ठीक कह रहे हो। थोड़ी ही देर लगी थी कि किसी दूसरे व्यक्ति ने कह दिया नहीं–नहीं 'पा' टीम जीतेगी। फकीर ने कहा कि तुम ठीक कह रहे हो। तभी तीसरा व्यक्ति बोल पड़ा–फकीर महोदय ऐसा कैसे हो सकता है कि 'भा' भी जीते और 'पा' भी जीते–जीतेगी तो कोई एक ही टीम। फकीर महोदय ने मुस्कान के साथ उत्तर दिया–तुम ठीक कह रहे हो–और मौन हो गये।

आजकल देश की सरकार ऐसे ही किसी फकीर की लकीर पर चलती दिखाई दे रही है। गली–मोहल्ला, बाजार हो या सरकार का दरबार हो, सभी स्थलों पर नये–नये अपराध–अत्याचार होते जा रहे हैं। जिन्हें देख–सुनकर प्रजा में त्राहि–त्राहि मच जाती है। सत्ताधारी या सत्ताभिलाषी नेता लोग रोते–बिलखते पीड़ित परिवार की ओर दौड़ लगाते जाते हैं और आर्थिक सहायता का आश्वासन देकर लौट आते हैं। यह तो रही भुक्त भोगी संत्रस्त लोगों के प्रति 'हां'। और

वेद–व्योम से झरता गीता का मानवोदय पञ्चामृत

● देवनारायण भारद्वाज

अपराधी–अत्याचारी दण्ड से बचते रहते हैं; पकड़ में नहीं आते, आते हैं तो बच जाते हैं, यह हुई उनके प्रति 'हां'।

सरकार का विशाल तंत्र होते हुए भी वह अपराधियों को दण्डित नहीं कर पाती है क्योंकि जो दण्डाधिकारी होते हैं–वे स्वयं दण्ड के अधिकारी होते हैं। घोषित अपराधियों से बढ़कर उनके स्वयं के अपराध–अत्याचार कहीं बढ़कर देखने में आते हैं। मन्त्रीगण, प्रशासकगण, राज–काजकर्ता, सम्विदायकगण सभी एक से एक बढ़कर भ्रष्टाचार में संलिप्त पाये जाते हैं। अपराधी भी अपने अनाचार–अत्याचार पर तब गर्व करते दिखाई देते हैं, जब उन्हें पकड़ने के लिए चौकीदार नहीं, सिपाही नहीं, दरोगा नहीं, उनके साथ वरिष्ठ आरक्षी अधीक्षक स्वयं उपस्थित होते हैं। अपराधों की सूची यहाँ देने की आवश्यकता नहीं है। नित्यप्रति के अखबार एवं दूरदर्शन, घर–बाजार सर्वत्र उनको प्रत्यक्ष दिखाते रहते हैं। चोरी, डकैती, लूटमार से बढ़कर सूदखोरों की चढ़ाई से परिवार के परिवार आत्महत्या पर बाध्य होते देखे जाते हैं। बैंकों में बढ़ती असुविधा गरीब को सूदखोरों की सुविधा की ओर ढकेल देती है, जो परिवार को दुविधा में डाल देती है। सूदखोर ब्याज वृद्धि के साथ–साथ परिवार की युवतियों पर कुदृष्टि डालते हैं, उन्हें बचाने के लिए वे पुत्रियों सहित गंगा में समा जाते हैं। नरौरा की गंगा–धारा में नन्हीं बेटियों सहित पिता को डूबते देखा गया।

युवती तो युवती, अबोध बालिकायें भी बलात्कारियों की शिकार हो रही हैं। एक ओर धार्मिक बनकर कन्या पूजन किया जाता है। दुर्गा, लक्ष्मी, सीता, सावित्री की आराधना में व्रत–उपवास रखते हैं, दूसरी ओर उन्हें गर्भ, गोद या गृह में ही मारने को तैयार हो जाते हैं। भागवत की कथायें चटकारे लेकर सुनते रहते हैं, किन्तु साक्षात भगवती की व्यथायें ही नहीं हत्यायें भी बढ़ाते रहते हैं। इसके दुष्परिणाम को श्रीमद् भगवत्गीता (16.27–28) में दर्पण की भांति प्रदर्शित किया गया है। यथा–

यज्ञे तपसि दाने च स्थितिः सदिति
चोच्यते।
कर्म चैव तदर्थीयं सदित्येवाभिधीयते।।

भावार्थ – यज्ञ, तप, दान और अन्य समस्त कर्म यदि तुम परमात्मा को समर्पित करके अन्तःकरण की शुद्धता और सभ्यता के साथ करते हो तो तुम जीवन का सर्वोच्च लक्ष्य–मोक्ष, शाश्वत आनन्द प्राप्त करोगे। ब्रह्म के लिए और ब्रह्म के नाम ओ३म् को लक्ष्य कर यदि तुम कर्म करते हो तो तुम पर परमात्मा की परम शान्ति और पूर्णत्व की वृष्टि होगी। इनके निमित्त किया गया पुरुषार्थ सत्कर्म कहलाता है, इसके विपरीत–

अश्रद्धया हुतं दत्तं तपस्तप्तं कृतं च यत्।
असदित्युच्यते पार्थ न च तत्प्रेत्य नो इह।।

भावार्थ – बिना श्रद्धा के किया हुआ हवन, दिया हुआ दान और किया हुआ तप 'असत्' कहलाते हैं। इसलिए हे अर्जुन, ये न तो इस लोक में न ही मरणोपरान्त फल देने वाले हैं। ये क्रियाएं उतनी ही व्यर्थ होंगी, जितनी कि पर्वतीय प्रदेश में चट्टानों पर गिरती वर्षा की बूँदें अथवा भस्मीभूत अग्नि में डाली गयी घृत आहुतियाँ। बिना श्रद्धा के मनुष्य अहंकारी व दम्भी बन जाता है। उसका

शेष पृष्ठ 7 पर ☞

यह वही भारत देश है

● हरिश्चन्द्र वर्मा 'वैदिक'

जहाँ अयोध्या नगरी में पुरुषोत्तम राम और मथुरा में योगीराज गौभक्त श्रीकृष्ण का जन्म हुआ था।

और इसी पवित्र भूमि में अहिंसावादी महात्मा बुद्ध देव तथा जैन धर्म के प्रचारक महावीर स्वामी का जन्म हुआ। सन् 1824 में ऋषि दयानन्द और 1863 में स्वामी विवेकानन्द जन्में उसके पश्चात् स्वामी श्रद्धानन्द, महात्मा गुरुदत्तद्यत्त, महात्मा नारायण स्वामी, महात्मा आनन्द स्वामी आदि ये जितने तपस्वी हुए भारत में ही हुए और देश–विदेशों में वैदिक हिन्दू धर्म का प्रचारक करते रहे। इस आर्यावर्त भारत भूमि को तपो भूमि इसलिए कहा जाता है कि इसमें एक से एक ऋषिमुनि तथा संन्यासी इस भारत भूमि में ही जन्मे। इसलिए भारत को विश्व में आध्यात्विक ऊर्जा का एक महान देश कहा जाता है और धर्म प्रचार के लिए बहुत प्राचीन काल से वैदिक ऋषि–मुनि और महात्मा जनविदेशों में जाते थे।

इतिहास में पता चलता है कि ईरान, सीरिया, ग्रीस और चीन आदि देशों में शिक्षा देने के लिए यहाँ के ऋषि विद्वान् जाया करते थे और उन देशों के लोग भी शिक्षा ग्रहण करने के लिए आर्यावर्त में आया करते थे। किन्तु उनके समय–समय पर आने से आर्यों में भी अवैदिकता का समावेश होने लगा। इस तरह से जाति बहिष्कार, धर्मप्रचार और पुनः जाति सम्मेलन आदि जितने कुछ आर्योचित मृदु उपाय हुए सबके परिणाम में लाभ के साथ–साथ कुछ न कुछ हानि भी हुई।

सर्वप्रथम जिन विदेशियों के भारत में प्रवेश का इतिहास मिलता है। वह आस्ट्रेलिया निवासियों का है। ऋषि पुलस्त धर्म प्रचार के लिये आस्ट्रेलिया गये थे। पर वहाँ के राजा तृणबिन्दु की पुत्री से उनका विवाह हो गया। उसी से विश्रवा पैदा हुआ, जो प्रसिद्ध राजा रावण का पिता था। रावण अपने पिता की आज्ञा न मानकर मनमानी, अत्याचार करने लगा, रावण संस्कृत विद्वान था, किन्तु आर्यों से देश के कारण उन्होंने वेदों का पूरा अनर्थ कर डाला, उस के अत्याचार से ऋषियों को बहुत कष्ट सहन करना पड़ रहा था। इसी मद्ध राजा श्रीरामचन्द्र न उस अहंकारी दुष्ट का वध कर डाला।

अतः जब–जब धर्म की हानि हुई अत्याचार बढ़ा तब–तब ऋषि महात्माओं ने उन सब का विरोध किया। किन्तु आज का भारत अब ऋषियों, महात्माओं, साधु–सन्तों का नहीं रह गया है। जिस भारत में गोमेध=गौवों को सन्मान पूजा की जाती थी, दूध–दही की नदियाँ बहती थीं। वहाँ उन्हें काटकर खून की नदियाँ बहाई जा रही हैं। जय हिन्द का नारा लगाने वाला, भारत को माता कहने वाला श्री राम श्री कृष्ण और ऋषि दयानन्द की धरती पर नित्य हजारों गौवों को भारत सरकार धनोपार्जन के लिये बूचड़खाने में कटवा रही है।

देखिये यजुर्वेद में आदेश है कि – **"विमुच्यध्वमध्न्यादेवमानाअगन्म तम सस्पारमस्य। ज्योतिरापाम।।"** (यजु. 12) भावार्थ–मनुष्य को चाहिए कि गौआदि पशुओं को कभी न मारें न मरवायें तथा न किसी को मारने दें। जैसे सूर्य के उदय होने से रात्रि निवृत्त होती है वैसे वैद्यक शास्त्र की रीति से पथ्य अन्नादि पदार्थों का सेवन कर रोगों से बचो। इस प्रकार वेदों में गाय आदि पशुओं को मारने की आज्ञा नहीं है।

और जो विदेशी इतिहासकारों ने वैदिक युग के यज्ञ में गौहत्या होता था लिखा है– यह उनकी मूर्खता है। वेदों के सत्यार्थ को न समझकर ऐसा लिखकर (जैसाकि ई. पूर्व अंग्रेजों का योरोप और आदि देश प्रायः असभ्य और उनके पूर्वज जंगलियों जैसा व्यवहार करते थे) हमारे वैदिक ऋषियों को भी असभ्या बनाया गया है। मैक्समूलर ने तो वेदों को बहुदे वाद एवं गड़ेरियों का उटपटांग गाना बताया, उन्होंने भी बहुत अनर्थ किया है, किन्तु ऋषि दयानन्द के शब्दों में वेद विद्या की पुस्तक है, को देखकर एवं जानकर आज भी उन्हीं पाश्चात्य विद्वानों के लिखे हुए भारत के इतिहास को पढ़ाया जाता है और अपनी सर्वोत्तम प्राचीन वैदिक श्रीराम, श्रीकृष्ण, राजा अश्वपति एवं स्वायंम्भुवमनु आदि की सभ्यता एवं संस्कृति से विद्यार्थियों को अंधेरे में रखा जा रहा है।

हमारे सभी पूर्वज गो भक्ति के अनेक अनुष्ठान करते थे। क्योंकि हमारे वैदिक ग्रन्थों में **"गावोविश्वस्यमातरः"** अर्थात् गाय विश्व की माता है, ऐसी घोषणा की गई है। स्वायंम्भुव मनु ने अनेक गोमेध यज्ञ किये। मेध "संगमे" धातु से मेध शब्द बनता है, जिसका अर्थ है गाय का सत्कार किंवा पूजा।

इस प्रकार हमारे वैदिक युग की सभ्यता सर्वोत्तम भी किन्तु महाभारत युद्ध के कुछ काल के पश्चात् वेदज्ञों के अभाव में पौराणिक पण्डितों और विदेशी इतिहासकारों दोनों ने मिलकर वैदिक ऋषियों पर कुठाराघात किया है। पण्डितों में वेदों के भाष्यकार–महिधर, उब्बट और सामणाचार्य आदि ने उन वेद मंत्रों के अर्थ अपने–अपने स्वार्थ के अनुसार किये, उन वेदों में इतिहास, जादू–टोना, तंत्र–मंत्र, भूत–प्रेत, पशुबलि, प्रतिमा पूजा, कर्मगत जाति को जन्मगत आदि का वर्णन कर उस विद्या की पुस्तक को बिगाड़कर रख दिया।

आज 21 वींसवी में भी लोग समझ नहीं पा रहे हैं कि जिन ऋषियों द्वारा वेद, वेदांग, शास्त्र और उपनिषद रचे गये थे, वे कोई अनार्य नहीं थे और न उनके ग्रन्थों में कहीं गौहत्या का विधान है, उनके वैदिक ग्रन्थों में राजनीति भी सर्वोत्तम थी (देखिए 'सत्यार्थ प्रकाश' वैदिक सम्पत्ति और वैदिक सम्पदा' पुस्तकों को) वर्ण वेद कर्मगत था, जातिगत नहीं कि जो शूद्र है वह चाहे कितना ही विद्वान हो जाए उसे शूद्र ही समझा जाएगा। उदाहरण के लिये बाल्मीकि–मेहरजाति में जन्म लेकर डाकू बन गये थे, किन्तु सतसंगवश संन्यासियों द्वारा वेद शास्त्रों का अध्ययन कर ब्रह्मर्षि बाल्मीकि बन गये।

अतः भारत का वैदिक युग का इतिहास निःश्पक्ष रूप से नहीं लिखा गया, यदि सही तरीके से लिखा जाता तो आर्यों को मांसाहारी और यज्ञों में गौहत्या की जाती थी, ऐसा नहीं लिखा जाता।

जिस भारत में हिन्दू लोग गौ का सम्मान करते हैं, जिस भारत में श्री कृष्ण गौरक्षक थे, आज उन्हीं आर्यों को जिनका मौलिक पुस्तक वेद है, भला उसके विरुद्ध आचरण कैसे कर सकते थे। क्या मुसलमान 'कुरआन' के विरुद्ध निषिद्ध मांस का भोजन कर सकते हैं? मस्जिद में निषिद्ध पशु का हत्या कर सकते हैं? नहीं, तो आर्य लोग वेदों के विरुद्ध कैसे गौ हत्या कर सकते थे?

वेदों में यज्ञ करने की बड़ी प्रशंसा की गई है क्योंकि उनमें 'अज' अर्थात् अन्न सामग्रियों से यज्ञ करने का विधान है, जिससे वायु का शोधन, रोगों का शमन और विशेष रूप से वृष्टि भी होती है तथा वेद मंत्र कंठस्थ भी होते हैं।

हम बता देना चाहते हैं जर्मनी देश के मैक्समूलर साहब संस्कृत के कोई खास विद्वान नहीं थे, उन्होंने भी वेदों का यथायोग्य अर्थ नहीं किया है, जैसे वैदिक 'अश्व' का उन्होंने घोड़ा किया है, जबकि उसका अर्थ 'अग्नि' भी है। देखिए– **'अश्वनं न त्वां वारवन्तम् विंदध्याअग्निंमोभिः।। (ऋग्वेद)** अर्थात् अश्वं का अर्थ अग्नि है। वेद मंत्रों का अर्थ जहाँ जैसा होना चाहिए वहाँ उसके विपरीत अर्थ किये हैं, इसलिए वे योरोप देश के लिये विद्वान हो सकते हैं 'आर्यावर्त देश के लिये नहीं।

वैदिक 'अज' का अर्थ अन्नादि पदार्थ है, 'मेध' का अर्थ यज्ञ है, इससे सिद्ध हुआ कि यज्ञाग्नि में अन्नादि सामग्रियों से होम करना चाहिए। स.प्र. एकादश, समु. में "ब्राह्मण ग्रन्थों में अश्वमेघ, गोमेध, नरमेध आदि जो मंत्र हैं उनका सत्यार्थ इस प्रकार हैः– 'राष्टंवाअश्मेघः।। शत.13,1,6,3। अन्न हिगौः।। शत. 4,3,1,25।। अग्निर्वाअश्वः।। शतपथ ब्राह्मणे।। अर्थात् घोड़े, गाय, आदि पशु तथा मनुष्य के मार के होम करना नहीं लिखा, केवल वाममार्गियों के ग्रन्थों में ऐसा अनर्थ लिखा है किन्तु यह भी बात वाममार्गियों ने चलाई। और जहाँ–जहाँ लिखे, वहाँ–वहाँ भी वनमार्गियों ने प्रक्षेप किया है। देखोः– राजा न्याय धर्म से प्रजा का पालन करे, विद्यादि का देने हारा यजमान और अग्नि में घी आदि का होम करना– अश्वमेघ, अन्न इन्द्रियाँ, किरण, पृथिवी आदि को पवित्र रखना 'गोमेध' जब मनुष्य मर जाए तब उसके शरीर का विधिपूर्वक दाह करना 'नरमेध' कहता है।।'

आज भारत सरकार के सामने कई बड़ी समस्यायें उपस्थित हैं आज 'साधु सन्त तथा प्रजा सभी दुःखी हैं– सर्वप्रथम गौहत्या जिसे बिल्कुल बन्द करवा देना है। भारत में गुजरात ही एक ऐसा राज्य है जहाँ गौवों को नहीं काटा जाता, उसका निर्यात नहीं किया जाता किन्तु वह सब राज्यों से उन्नतशील राज्य बनने लगा है। दूसरा–हिन्दुओं का तीर्थ गंगा है जो एक समय कीटाणुनाशक पवित्र थी किन्तु आज वह मैली हो गई है, वह इसलिए कि शहरों के गन्दे काले पानी को शोध करे। इसी गंगा को गन्दगी से बचाव के लिये स्वामी निगमानन्द ने हरिद्वार में अनशन किया था। अंत में लम्बे समय तक अनशन के व जगह से उनका प्राणान्त हो गया किन्तु सरकार ने उनके तरफ ध्यान नहीं दिया।

तीसरा– देश में बलात्कार जैसा जो महाअपराध हो रहा है, उसे रोकने की व्यवस्था तुरंत होनी चाहिए। अभी हाल ही में जो सामूहिक बलात्कार हुआ। सरकार तभी जागती है जब जनता अत्याचार के प्रति आवाज उठाती है। उस बलात्कार को लेकर जब छह दिन तब विद्रोह, प्रदर्शन होता रहा तब सरकार ने कहा कि अभियुक्तों को बख्श नहीं जायेएगा उन्हें दंड अवश्य मिलेगा।

'आर्य स्वाभिमान' के सम्पादकीय में' आर्य ज्ञानेश्वर जी लिखते हैं कि "रविवार

शेष पृष्ठ 8 पर ☞

वर्तमान विज्ञान से तुलना सहित

ऋग्वेद में सृष्टि उत्पत्ति एवं विस्तार

● शिवनारायण उपाध्याय

यह अब एक सर्व स्वीकृत विषय है कि ऋग्वेद विश्व का प्राचीनतम ग्रन्थ है। प्राचीनतम ग्रन्थ होने के साथ ही यह ज्ञान–विज्ञान का भण्डार भी है। इसमें विज्ञान सम्बन्धी कुछ ऐसे मंत्र भी हैं जिनकी विज्ञान में अभी खोज नहीं हो सकती है। ऋग्वेद में ऐसे यानों का वर्णन भी है जो जल, थल एवं आकाश में समान रूप से चल सकते हैं। ऋग्वेद में सृष्टि की उत्पत्ति, रचना एवं विस्तार के विषय में भी विस्तृत वर्णन हुआ है। जो वर्तमान विज्ञान के अनुकूल भी है।

किं स्विद्वनं क उ स वृक्ष्त आस यतो द्यावा पृथिवी निष्टतक्षुः। ऋ. 10.81.4.

प्रश्न है कि वह कौन सा वन है तथा वह कौन सा वृक्ष है जिससे परमात्मा प्रेरित जगत् की रचनाओं में लगी शक्तियां द्यु और पृथ्वी लोक का निर्माण करती है? इस प्रश्न का उत्तर देने के पूर्व सृष्टि की उत्पति के सम्बन्ध में कुछ धारणाओं पर हम विचार करना अधिक पसंद करेंगे।

स्वामी शंकराचार्य के अनुसार यदि सृष्टि को मिथ्या माना जावे तो मानवीय चेतनता की तत्वमीमांसीय समस्या के अतिरिक्त हमारे लिए अन्य कोई समस्या ही नहीं रहेगी। वास्तव में उनकी इस मान्यता का कारण उनका सृष्टि को उसके कारण रूप में खोजने का प्रयत्न था। उनकी खोज का अन्तिम परिणाम यह था कि ब्रह्म और केवल ब्रह्म ही शाश्वत सत्य है परंतु व्यावहारिक रूप में जगत् की सत्ता को स्वीकार करते थे।

दूसरा विचार यह है कि पदार्थ एवं ऊर्जा के मेल में बना यह संसार शून्य से उत्पन्न हुआ है, इतना बाहियात है कि विचार करने के योग्य भी नहीं है। गीता में स्पष्ट कहा गया है–

'नास्तो विद्यते भावोनाभावो विद्यते सत।' सृष्टि की उत्पति पर तीसरा विचार यह है कि सृष्टि सदैव से है और सदैव ही बनी रहेगी। अरिस्टोटल तथा अन्य अधिकांशी यूनानी लोग सृष्टि के प्रारंभ होने की विचारधारा का विरोध करते थे। उनके अनुसार यह तो ईश्वर की सत्ता का खुला अपमान था। जैन धर्म भी सृष्टि की उत्पत्ति को स्वीकार नहीं करता है।

स्वामी दयानन्द सरस्वती का विचार इससे भिन्न है। वे 'सत्यार्थ प्रकाश' के बारहवें समुल्लास में लिखते हैं–जो संयोग से उत्पन्न होता है वह अनादि और अनंत कभी नहीं हो सकता है। सभी संयुक्त पदार्थ उत्पत्ति और विनाश वाले देखे जाते हैं फिर यह जगत् उत्पत्ति और विनाश वाला क्यों नहीं होगा? वर्तमान भौतिक विज्ञान भी इसका समर्थन करता है।

ज्योति विज्ञान के प्रसिद्ध विद्वान नोब्लोक का कहना है कि ज्योति विज्ञान यह बताता है कि विश्व का श्री गणेश सुदूर अतीत में है और भौतिकी यह भविष्यवाणी करती है कि अन्त में इसका अंत भी होगा।

अब हम पहले वैज्ञानिक विचारों पर ही विचार करते हैं। डॉ. क्वीवलैण्ड कोथरान लिखते हैं–रसायन शास्त्र यह रहस्योद्घाटन करता है कि द्रव्य का अस्तित्व समाप्त होता जा रहा है। कुछ प्रकार के दवों का तेजी से और कुछ का धीरे–धीरे। इसीलिए द्रव्य का अस्तित्व शाश्वत नहीं है। इसका अर्थ हुआ कि उसका अंत है तो कभी न कभी उसका आदि भी होना चाहिए।

डॉ. एडवर्ड लूक्षर कैसर लिखते हैं–ऊष्मा गति का दूसरा नियम जिसे एन्ट्रोपी कहते हैं सृष्टि के सदैव से रहने की बात को गलता सिद्ध कर देता है। एन्ट्रोपी के नियम के अनुसार अपेक्षाकृत गरम पिण्डों से ताप ठंडे पिण्डों की तरफ लगातार प्रवाहित होता रहता है तथा प्रवाह को उलटकर स्वतः विरुद्ध दिशा में प्रवाहित नहीं किया जा सकता है। ताप का यह प्रवाह उस समय तक चलता रहता है जब तक कि दोनों पिण्डों का ताप एक सा न हो जाए। उस स्थिति में कोई उपयोगी ऊर्जा शेष नहीं रह जावेगी। फिर कोई भी भौतिक या रासायनिक परिवर्तन संभव नहीं होगा। परंतु चूंकि अभी वह समय नहीं आया है, इसका अर्थ है कि सृष्टि सदैव से नहीं है। इस प्रकार विज्ञान यह प्रसिद्ध कर रहा है कि हमारी इस सृष्टि का प्रारंभ है और ऐसा करने में परमात्मा की सत्ता को भी सिद्ध कर रहा है क्योंकि जिसका भी आदि है वह स्वयं प्रारंभ नहीं हुआ है उसका कोई न कोई प्रारंभ करने वाला है।

सन् 1929 ई. में एडबिन हुब्बल ने एक महत्त्वपूर्ण खोज की कि आप कहीं से भी दखें तो आप देखेगें कि दूर की निहारिकाएं हमसे दूर हटती जा रही हैं, और जो निहारिका हमारे जितना अधिक दूर है उतनी ही अधिक तेजी से हमसे दूर हटती जा रही है। दूसरे शब्दों में सृष्टि फैल रही है। इसका अर्थ यह भी है कि प्रारंभिक काल में ये चीजें कम दूर पर रही होंगी। फिर उसने V=HR नियम खोजा। V=आकाशगंगा के खिसक ने गति, R= आकाशगंगा की दूरी, H=HUBBLE'S CONSTANT HUBBLE ने बताया कि जिसे Big Band कहते हैं तब सृष्टि अत्यंत ही सूक्ष्म तथा अनन्त घनत्व वाली थी। ऐसी स्थिति में विज्ञान के सभी नियम और भविष्णी करने की योग्यता भी टूट जावेगी। यदि Big Bang से पूर्व कोई घटना घटी है तो वह वर्तमान काल में क्या हो रहा है। इस पर प्रभाव नहीं डालेगी। स्टीफन डबल्यू हाकिङ्ग प्रलयावस्था में भी समय का होना मानता है।

वर्तमान विज्ञान में सृष्टि उत्पति Big Bang से ही मानी गई है। इस मत का प्रारंभ अल्फर–बैध–गेमो द्वारा हुआ है। उनके अनुसार यह विश्व ताप की सघनता और तापमान की उच्च अवस्था से विस्फोट होने के कारण बना है। यह विश्व मूलभूत में अत्यन्त संपीडित तारों एवं आकाश गंगाओं की निकटवर्ती अत्यन्त गरम गैसों से तथा पृष्ठ भूमि में विद्यमान सामग्री से बना है। इस सिद्धान्त में यह माना जाता है कि जो भारी तत्व अपेक्षाकृत हल्के तत्वों के क्रमिक चरणों में हुए मेल से बने हैं। एक विशेष समय था कि जब ये आकाश गंगाएं बनी थीं गुरुत्वाकर्षण शक्तियां आकाश गंगाओं के निर्माण में कारण भूत थीं।

डॉक्टर डोलाल्ड हेनरी पोरटर प्रोफेसर मेरियन विश्वविद्यालय लिखते हैं–यदि मैं यह सिद्धान्त मान लूं कि यह सृष्टि अत्यंत संपीडित अत्यन्त तापयुक्त स्थिति से प्रारंभ हुई है तो मूल कण के कर्ता के रूप में और उस ऊर्जा के स्रोत के रूप में परमात्मा को भी स्थान देना होगा जिसने यह दबाव और ताप पैदा किया। एक दूसरा मत गोल्डी–बौण्डी–होइल का है जिसे निरन्तर सृजन का सिद्धान्त कहते हैं। यह सिद्धान्त इस मान्यता पर आधारित है कि सृष्टि देश और काल दोनों में समरुपता तो है किन्तु गति शून्य नहीं है। इस सिद्धान्त के निर्माता इस बात पर सहमत हैं कि विश्व फैल रहा है एवं आकाशगंगाएं बाहर की ओर खिसक रही हैं। इन आकाश गंगाओं के बिखरते जाने की क्षतिपूर्ति के लिए और विश्व की शक्लसूरत को ज्यों की त्यों बनाये रखने के लिए वे यह मानते हैं कि द्रव्य का लगातार सृजन हो रहा है। और उनसे नये तारापुंज बन रहे हैं ताकि दुरविक्षण की दृष्टि सीमा के बाहर और परे सरकती हुई आकाशगंगाओं के रिक्त स्थान की पूर्ति हो सके।

अब हम ऋग्वेद के आधार पर सृष्टि उत्पत्ति के विषय पर विचार करते हैं। सृष्टि सदा से नहीं है, इसकी रचना हुई है इस विषय पर ऋग्वेद स्पष्ट रूप से वर्णन करता है–

त्रिरस्मैस्पत धेनवो दुदुह्रे सत्यामाशिरं पूर्वे व्योमनि।

चत्वार्यन्याभुवनानिनिर्णिने चारुणि चक्रेयदृतैर वर्धत। ऋ. 9.70.1

भावार्थ–परमात्मा ने प्रकृति रूपी उपादान कारण से इस सृष्टि की रचना की है और वह इस प्रकार की प्रकृति से महत्तत्व, महत्तत्व से अहंकार, अहंकार से पञ्चसूक्ष्म तन्मात्राएं, सूक्ष्म मन्मात्राओं से पांच ज्ञानेन्द्रियां, पांच कर्मेन्द्रियां, पांच स्थूल तन्मात्राएं आकाश, वायु, तेज, जल पृथ्वी! यहाँ महत्त्व को गिनती में इसलिए नहीं लिया गया है क्योंकि वैदिक विद्वानों की दृष्टि में तो वह प्रकृति ही माना गया है। अहंकार से लेकर पृथ्वी तक 21 तत्वों की यहाँ गणना हुई है।

सांख्य दर्शन में इनकी गणना इस प्रकार की गई है–प्रकृति, (सत्, रज, तम कणों की साम्यावस्था) महत्तत्व, अहंकार पांचसूक्ष्म तन्मात्राएं (शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध) पांच ज्ञानेन्द्रियां, पांच कर्मेन्द्रियां, मन, पांच स्थूल तन्मात्राएं आकाश, वायु, तेज, जल और पृथ्वी तथा पुरुष, इस प्रकार कुल पच्चीस तत्व।

विज्ञान में सृष्टि की Big Bang से पूर्व स्थिति पर विचार नहीं किया गया है परंतु ऋग्वेद में सृष्टि उत्पत्ति के पूर्व प्रलयावस्था पर भी गहन विचार किया गया है।

गीर्ण भुवनं तमसापगूडहमाविः स्वर भवज्जाते अग्नौ।

तस्य देवाः पृथिवी द्यौरुतापोऽरणन्नोषधीः सख्येअस्य। ऋ. 10.88.2

सृष्टि के पूर्व प्रलयकाल में समस्त जगत् अपने कारण में निगला गया हुआ प्रलयान्धकार अथवा प्रकृति से ढका रहता है। ताप के प्रकट होने पर वह प्रादर्भुत होता है।

इस ताप के सहकार्य से इन्द्र आदि देव, पृथ्वी, द्युलोक, जल अन्तरिक्ष तथा औषधियां आदि उत्पन्न होते हैं। नासदीय सूक्त में इसका अधिक अच्छा वर्णन हुआ है–

नासदासीन्नो सदासीत्तदानीं नासीद्रजोनो व्योमा परोयत्।

किमावरीवः कुह कस्य शर्मन्नम्भः किमासीद्गहनं गभीरम्।। ऋ. 10.129.1

सृष्टि की रचना के पूर्व न अभाव रहता और न व्यक्त जगत् रहता है, न कोई लोक रहता है और न अन्तरिक्ष तथा उसके ऊपर–नीचे के लोग लोकान्तर रहते हैं। क्या किसको घेरता है? सब कुछ कुहरे के अन्धकार में आवृत रहता है। फिर अगले मंत्र में कहा गया है–उस अवस्था में न मृत्यु और न नित्यकाल का व्यवहार रहता है। दिन और रात्रि का ज्ञापक चिन्ह भी नहीं रहता है। प्रकृति से युक्त कम्पनरहित एक परमेश्वर अपने में स्फूर्तिमात्र रहता है। उससे भिन्न, उसके समान, उसके अधिक और उस जैसा कोई नहीं रहता है।

ऋग्वेद 10.190 के मंत्रों में सृष्टि उत्पति का क्रम भी दिया गया है।

ऋतं च सत्यंचाभीद्वात्पसोऽध्जायत।

ततो रात्र्यजायत ततः समुद्रो अर्णवः। ऋ. 10.190.1

परमेश्वर के सर्वतो व्याप्त तप (पाप) से ऋत और कार्यरूप प्रकृति प्रकट होते हैं और उसी से प्रलय की अंधकार रूपी रात्रि उत्पन्न होती है और उसी से आकाशीय समुद्र उत्पन्न होता है। वेद में सृष्टि–प्रलय प्रवाह से अनादि माना गया है।

सूर्या चन्द्रमसौ धाता यथापूर्वमकल्पयत।

दिवं च पृथिवी चान्तरिक्षमथो स्वः। ऋ. 10.190.3

जगत् का कर्ता परमेश्वर सूर्य और चन्द्र आदि को पूर्व कल्प के समान और वैसा ही बना

शेष पृष्ठ 11 पर ☞

☞ पृष्ठ 4 का शेष

वेद–व्योम से झरता गीता....

हृदय कठोर हो जाता है। बिना श्रद्धा के शत–शत यज्ञ भी क्यों न किये जायें और ईश्वर के समर्पण भाव से क्यों न हो, समस्त विश्व की सम्पदा भी यदि बिना श्रद्धा और समर्पण भाव के दान कर दी जाये, इसका कोई मूल्य नहीं होगा। (सन्दर्भ दृष्टव्य श्रीमद्भगवत्गीता भाष्य श्री स्वामी शिवानन्द सरस्वती–अनुवाद द्वारा विदुषी श्रीमती गुलशन सचदेव) । व्यक्ति, परिवार, समाज, राष्ट्र एवं विश्व–वसुधा के सुख–सौहार्द के लिए आचार्य चाणक्य इस यज्ञ विधान को अनिवार्य मानते थे। हवन–होम से ही घर, घर बनता है, इसी से देव पूजा, संगतिकरण एवं दान की त्रिवेणी बहती है। इसलिए तो होम शब्द अंग्रेजी के शब्द कोश में जाकर 'घर' का पर्यायवाची बन गया। आचार्य चाणक्य किंचित आक्रोश में आकर कहते हैं–

न विप्र पादकोदक कर्दमानि न वेद शास्त्र ध्वनि गर्जतानि।

स्वाहा–स्वधाकार विवर्जतानि श्मशान तुल्यानि गृहाणि तानि।।

आचार्य चाणक्य की इस कठोरता को कोमलता में तभी बदला जा सकता है, जब घर–घर में उनके आदेश का परिपालन इस रूप में हो–

स विप्रपादोदक कर्ममानि स वेद शास्त्र ध्वनि गर्जतानि।

स्वाहा स्वधाकार संयुतानि स्वर्गेण तुल्यानि गृहाणि तानि।।

सत्यार्थप्रकाश के चतुर्थ समुल्लास में महर्षि दयानन्द सरस्वती ने मनुस्मृति के सन्दर्भ से बताया है कि स्त्री की प्रसन्नता से सब कुल प्रसन्न और उसकी अप्रसन्नता से सब दुःखमय हो जाता है। **''यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः।''** श्लोक की इस प्रथम पंक्ति को खूब दोहराया जाता है–अर्थात् जिस घर में स्त्रियों का सत्कार होता है उसमें विद्यायुक्त पुरुष होके देव संज्ञा धरा के आनन्द से क्रीड़ा करते हैं। श्लोक की दूसरी पंक्ति पर गहन ध्यान नहीं दिया जाता है। **''यत्रैतास्तु न पूज्यन्ते सर्वास्तत्राऽफलाः क्रिया।।''** जिस घर में स्त्रियों का सत्कार नहीं होता, वहाँ सब क्रियायें निष्फल हो जाती हैं। बात सत्कार न होने तक सीमित नहीं है, वह तो दुत्कार, तिरस्कार, हत्याकार तक पहुँचती रहती है। व्यक्ति ने यदि अपना परिवार ही बिगाड़ लिया, तो समाज, राष्ट्र एवं **''वसुधैवकुटुम्बकम्''** का निर्माण नितान्त असंभव है।

व्यक्ति, परिवार, समाज, राष्ट्र एवं विश्व मानवोदय के पांच सोपान हैं। आकार–प्रकार–रूप–रंग एवं वचन से कोई प्राणी मनुष्य लगता है, पर वास्तव में यह उसका संक्रमणीय स्वरूप है; वह मानव, दानव या देव कुछ भी हो सकता है। दानव अपने अहंकार की मदहोशी के सागर में डूबे रहने के कारण तथा देवतागण अपनी भोग लिप्सा के आकाश पर उड़ते रहने के कारण मानवता के हरे–भरे सुरभित धरातल से वंचित रहते हैं। यह मानव ही है जो अपने दुष्चरित्र के बोझ से भारी होकर अपयश के समुद्र में डूब जाते हैं या फिर अपने सच्चरित्र की वातास से हल्के होकर आसमान की ऊँचाई को प्राप्त कर लेते हैं क्योंकि वे अपने सदाचरण की वसुन्धरा पर सदैव अडिग बने रहते हैं। इस मानव देहधारी प्राणी को अवमानना के अधःपतन से बचाकर कीर्तिकामना का सिरमौर बनाने के लिए भगवती गीता के मानवोदय पंचामृतम् का रसपान उपयोगी है। (देखिए गीता अध्याय 18 श्लोक सं. 14–15)

अधिष्ठानं तथा कर्ता करणं च पृथग्विधम्।

विविधाश्च पृथक्चेष्टा दैवं चैवात्र पञ्चमम्।।

शरीरवाड्मनोभिर्यत्कर्म प्रारभते नरः।

न्यायं वा विपरीतं वा पञ्चैते तस्य हेतवः।।

अधिष्ठान–अर्थात् शरीर–पद या स्थानीय परिस्थिति, कर्तापन पृथक–पृथक प्रकार के साधन, नाना प्रकार की विभिन्न चेष्टायें, तथा इस प्रसंग में दैव–जन्म जन्मान्तर में पूर्वकृत कर्मों के फल का प्रभाव–मनुष्य शरीर, वाणी तथा मन से न्यायानुकूल अथवा न्याय विरुद्ध जो भी कार्य प्रारंभ करता है, उसके ये पांच कारण होते हैं। मनुष्य अपनी योग्यता व परिश्रम से इन कारणों को अपने अनुकूल करके उच्च पद पर जा पहुँचता है। उसके आधीन आज्ञा पालन के लिए अनेक कर्मचारी होते हैं। वह उन पर निर्भर रहकर स्वयं कुछ नहीं करता है तो असफल हो जाता है वह पदच्युत भले न हो, किन्तु अपयश का शिकार अवश्य बन जाता है। जो अपना कर्तापन बनाये रहता है, अपने उपकरणों का प्रयोग करता रहता है, तो वे उपकरण या यन्त्र उसके नियंत्रण में रहते हैं। जैसे शरीर में स्थापित अन्तःकरण एवं बाह्यकरण, सदुपयोग से सबल बने रहते हैं। ज्ञानेन्द्रियाँ एवं कर्मेन्द्रियाँ निष्क्रिय छोड़ देने पर व्यर्थ हो जाती हैं और क्रियाशील बनाये रहने पर विभिन्न चेष्टाओं में सहायक बनी रहती हैं।

''करत करत अभ्यास से जड़मत होत सुजान'' की कहावत चरितार्थ हो उठती है। इस प्रकार मनुष्य शरीर–मन–वाणी से उचित व अनुचित जो भी कृत्य करते हैं उसके लिए यही पाँचों बिन्दु उत्तरदायी होते हैं। मिलिए पुस्तकालय विज्ञान में स्वर्ण पदक प्राप्त तमिलनाडु के **कल्याणसुन्दरम** से जो 35 वर्ष तक कला महाविद्यालय में पुस्तकालयाध्यक्ष रहे। अपना सम्पूर्ण वेतन गरीबों में दान कर दिया करते थे, और अपने निर्वाह हेतु किसी छोटे से होटल में वेटर का काम करके मुट्ठीभर चावल व सांबर के लिए पैसे जुटा लिया करते थे। सेवा निवृत होने पर मिले दस लाख रुपये भी गरीबों की सहायतार्थ दान कर दिए। उनकी यह भी घोषणा है कि मरणोपरान्त उनके नेत्र व देह भी मेडीकल कॉलेज को छात्रों के क्रियात्मक अध्ययन हेतु दान कर दिए जाएंगे। कैंब्रिज के इन्टरनेशनल बायोग्राफिकल सेन्टर ने **कल्याणसुन्दरम** को दुनियाँ के सबसे सज्जन व्यक्तियों की श्रेणी में रखा है। संयुक्त राष्ट्र ने उन्हें बीसवीं सदी के सर्वोत्कृष्ट लोगों की सूची में गिना है और अमेरिका की संस्था ने उन्हें सहस्त्राब्दी पुरुष (मैन ऑफ द मिलेनियम) के रूप में चुना है। **कल्याणसुन्दरम्** ने गीता के उपरोक्त सन्देश के अनुसार अपने शरीर, कृतित्व, इन्द्रियों, चेष्टाओं एवं प्रारब्ध को अनुकूल करते हुए मानवीय कल्याण एवं आत्मीय सौन्दर्य के बल पर यथा नाम तथा गुण के अनुरूप स्वयं को सम्मान के शीर्ष पर पहुँचा दिया। ''कृतं में दक्षिणे हस्ते जयो मे सव्य आहितः'' (अथर्व 7.50.8) जिसको दायाँ हाथ कर्तव्य हेतु आगे बढ़ता रहता है, उसके लिए हर प्रकार की जीत बायें हाथ की मुट्ठी में आती रहती है, अन्यथा, ''अकर्माः दस्यु'' (वेद) कर्महीन व्यक्ति देव से दस्यु बन जाता है। श्लोक में वर्णित करण–इन्द्रियाँ व अन्तःकरण जब काम–क्रोध, लोभ–मोह, अंहकार के पंच गरल से ग्रसित हो जाते हैं, तब मनुष्य का पतन हो जाता है; वह पशु–पक्षी व अन्ध योनियों में चला जाता है। जब यही करण–उपकरण वेद प्रदत्त पञ्चामृत से परिपुष्ट हो जाते हैं तो मनुष्य को दैवत्व, स्वर्ग या मोक्ष के प्रशस्त पथ पर अग्रसर कर देते हैं। (देखिये यजुर्वेद अध्याय 34 मंत्र सं. 11)

पञ्चनद्युः सरस्वतीमपि यन्ति सस्रोतसः।

सरस्वती तु पञ्चधा सो देशेऽभवत्सरित्।।

अर्थात् शरीर में पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ नदियाँ हैं। चक्षु से प्रवाहित होने वाली ज्ञान नदी रूप–जल से भरी है तो श्रोत से चलने वाली शब्द रूप जल से, नासिका से चलने वाली नदी घ्राण–प्राण रूप जल से, रसना से चलने वाली नदी वाक्–स्वाद रस रूप जल से, तथा त्वचा से, चलने वाली नदी स्पर्श रूप जल से, प्रवाहित हो रही है। एक–एक ज्ञानेन्द्रिय से, एक–एक विषय का ग्रहण कर यह सम्पूर्ण पञ्च भौतिक संसार हमारे ज्ञान का विषय बन जाता है। ऐसे ही गृहणी रूपी सरस्वती अपनी सन्तानों के अन्नमय कोष को नीरोग, प्राणमय को सबल, मनोमय को निर्मल, विज्ञानमय को दीप्त और आनन्दमय कोष को सदा सोल्लास से संतृप्त करती है। घर–घर में मातायें सरस्वती होकर बच्चों की सर्वांगीण उन्नति की साधिका बनती हैं।

इस पञ्चामृत का पान कर लेने वाला फकीर वह उदासीन फकीर नहीं होता है जिसका प्रारंभ में वर्णन किया गया है। वह फकीर राजाओं का राजा हो जाता है। देखिए इस फकीर का धीर गम्भीर किन्तु नीर सा सरस स्वरूप। प्रातःकाल को राजधानी के प्रवेश द्वार पर वरिष्ठ राज प्रशासकों की भीड़ लगी है। सहसा बाहर से एक फकीर का वहाँ प्रवेश होता है। सभी ने फकीर को प्रणाम तो किया, किन्तु उन्हें आगे बढ़ने से रोक दिया। बोले हमारे राज्य का नियम है कि राजा की मृत्यु हो जाने पर राजधानी में प्रातः प्रथम प्रवेश करने वाले व्यक्ति को राजा बनाया जाता है वह पाँच वर्ष तक शासन करता है, फिर पास में बहती नदी के पार उसे जंगल में छोड़ दिया जाता है। कई लोग तो इस दहशत में पांच वर्ष से पहले ही मर जाते हैं। जो महाभोग में पड़कर पाँच वर्ष पूरे कर लेते हैं, उन्हें नदी पार जंगल में भेज दिया जाता है, जहाँ वे हिंसक पशुओं का शिकार हो जाते हैं। जब बचने का कोई मार्ग दिखाई नहीं दिया, तो वह फकीर सिंहासन पर बैठ गया। मंत्रिमण्डल को आदेश कर प्रजारज्जन पूर्ण सुचारु राज्य संचालन किया। अन्तिम वर्ष में नदी पर पुल बनवाया, जंगल को व्यवस्थित कर के सुन्दर नगर बसा दिया। पाँच वर्ष पूर्ण होने पर जनता–जनार्दन के मध्य अपना विदाई समारोह आयोजित किया। नदी के पार जाने की योजना बतायी। सभी शासन–तंत्र एवं प्रजातंत्र एक स्वर से उस फकीर राजा को राज्य त्यागकर न जाने के लिए मनाने लगे, उसने संसार नदी के इस पार व उस पार अथवा इहलोक एवं वह लोक दोनों ही सुन्दर सुखमय बना लिए थे। वही एक फकीर क्यों, कोई भी अमीर या साधारण जन जो उक्तानुसार ''वेद–व्योम से झरता गीता का मानवोदयापञ्चामृत'' पान कर लेता है, वह प्रजा–प्रभु दोनों का ही प्यारा बन जाता है।

'वरेण्यम' अवन्तिका प्रथम,
रामघाट मार्ग, अलीगढ़–202001 (उ.प्र.)

शबरी के बेर

● गिरीश त्रिवेदी

घटना सन् 1961 की है। प्रातः 9 बजे का समय होगा। मैं पुणे के ससुन रुग्णालय की सीढ़ियां उतर रहा था तभी मेरी नजर सीढ़ियों पर बैठे एक वृद्ध पर पड़ी। मेरे कदम आगे बढ़ते–बढ़ते रुक गए और फिर से मैंने उस वृद्ध की ओर देखा और ध्यान से उसके चेहरे का पढ़ा। वह एक ग्रामीण था और गहरे निराशा भरे चिंतन में रत था। मुझे न जाने क्यों ऐसा लगा कि मुझे उसकी मदद करनी चाहिए। मैंने पास जाकर पूछा। 'काका क्या विचार कर रहे हो क्या कोई परेशानी है?' उसने मुझे देखा और कहा 'हाँ। मैं गांव से अपनी पोती को यहाँ उपचार के लिये लाया हूँ। डॉक्टरों ने कहा है शीघ्र ही उसका ऑपरेशन करना होगा। अन्यथा वह बचेगी नहीं। ऑपरेशन में रक्त लगेगा अतः तुम जाओ और एक रक्तदाता का प्रबन्ध करो ताकि ऑपरेशन की तैयारी करें।'

1961 में रक्त दान के बारे में कुछ भी जन जागृति नहीं थी। मैं भी नहीं जानता था लेकिन मुझे लगा कि मुझे इस वृद्ध की मदद तो अवश्य करनी होगीं। मैंने उससे पूछा 'बाबा तुम्हारे साथ कौन–कौन हैं?' 'नहीं कोई नहीं। और इस अनजान शहर में कोई जान–पहचान भी नहीं है। रक्त का प्रबन्ध कैसे करूं, कुछ भी सूझ नहीं रहा। क्या मेरी पोती मर जाएगी।' मेरे मन में विचार आया क्यो मैं रक्तदान कर सकता हूँ। और मैं वृद्ध को साथ ले के डॉक्टर के पास गया। मैंने अपनी इच्छा जताई। डॉक्टर ने मेरी पीठ ठोकते हुए कहा– 'शाबाश बेटा। तुम युवा हो। स्वस्थ हो। तुम रक्तदान निर्भय होकर खुशी से करो। और जीवन में पहली बार मैंने रक्तदान कर दिया। उस समय मेरी आयु पच्चीस वर्ष थी।

सात दिन बाद मैं फिर से रुग्णालय गया। इस बार मैं उस बालिका के स्वास्थ्य को देखने जा रहा था जिसे मैंने रक्त दिया था। मैं जनरल वार्ड में गया और लगभग उस बालिका के खाट तक पहुंच गया तभी उस वृद्ध ने मुझे देखा। वह भागता हुआ आया। और एक बार हाथ जोड़कर मुझे ठीक से निहारने के बाद मेरे कदमों में गिर गया। उसने मेरे चरणों में माथा टेका। मैंने उसे कंधे पकड़ कर खड़ा किया। वह खड़ा होकर भी मुझे हाथ ही जोड़ता रहा। और फिर से कदमों में गिर गया। ऐसा उसने कई बार किया। कुछ देर तो वह कुछ बोल ही नहीं पाया। उसके नेत्र सजल थे। और फिर वो मुझे भावुक हो कहने लगा 'आप भगवान हैं। आप देवता हैं। आपने मेरी बच्ची के प्राण बचाए। आपने ही उसे मरने से रोका।' और फिर से माथा टेकने को झुका, मैंने उसे रोकते हुए कहा 'ये आप क्या कर रहे हैं। आप मेरे पिता समान है। मुझे लज्जित न करें। हाँ, अब बालिका का स्वास्थ्य कैसा है?' वृद्ध ने बालिका से मेरा परिचय कराया, होगी वह आठ–नौ वर्ष की। मासूम, प्यारा–सा चेहरा। मुस्कान ऐसी की अनायास ही किसी को भी मोहित कर दे।

'बिटिया ये वो ही बाबूजी हैं जिन्होंने तेरी जान बचायी हैं इन्होंने ही अपना रक्त देकर तुझे बचाया है। प्रमाण करो इन्हें।' उसने अपनत्व वाली मुस्कान फेंकी मेरी तरफ। उसने थोड़ा सर भी झुकाया और दोनों हाथों से मुझे प्रणाम किया। उस समय उसके हाथ में लड्डू था जिसे वह खा रही थी। उसने उस लड्डू को तोड़ा और आधा लड्डू मेरी ओर बढ़ाया। उस प्रेम भरे प्रसाद को मैंने स्वीकार किया। वे क्षण मेरे जीवन के सर्वाधिक आनन्द भरे अविस्मरणीय क्षण थे। मैंने लड्डू खाते–खाते उस बालिका से नजरें मिलाकर प्यार भरी मुस्कान दी। वह आधा लड्डू का उपहार मुझे क्षण भर में प्रेम, प्यार, मानवता, सरलता और सहिष्णुता के पाठ को पढ़ा गया।

उसके बाद तो मुझे रक्तदान का चस्का ही लग गया। परोपकार के आनन्द का स्वाद मैंने चख लिया था। अब भला रक्तदान के अवसरों को कैसे खो सकता था। तब से अब तक एक सौ तीन बार मैं रक्तदान कर चुका हूँ और हर बार का रक्तदान मुझे नई स्फूर्ति प्रदान करता है। और मैं अगले रक्तदान की उत्साहित मन से प्रतीक्षा करता हूँ। मुझे रक्तदान के लिये कई बार सम्मानित किया गया, कई उपहार मिले लेकिन कोई सम्मान या उपहार मुझे उतना आनन्द नहीं दे पाया जितना कि वह आधा लड्डू दे पाया। आज अर्धशताब्दी से अधिक समय बात गया है लेकिन उस लड्डू का स्वाद मुझे ज्यों का त्यों याद है। वह मेरे जीवन का सबसे बड़ा उपहार था। उस झूठे लड्डू में मैंने उस प्रेमानन्द का स्वाद चखा था जो शायद श्रीराम ने शबरी के बेर में चखा होगा।

उपरोक्त कहानी तो काल्पनिक है किन्तु मैं (लेखक) नेत्रदान और त्वचादान के लिए संकल्पबद्ध हूँ।

भारत में प्रतिवर्ष दस लाख लोग आग से झुलसकर मृत्यु पाते हैं। इनमें से अनेकों के जीवन त्वचादान करने से बचाए जा सकते हैं।

मृत्यु के बाद छ घंटों के भीतर त्वचा दान की जाती है। हर बड़े शहर में स्किन बैंक है। स्किन बैंक के व्यक्ति घर आते हैं। वे मृतक के पीठ और जांघों की त्वचा के भीतर की एक पतली सी परत निकालकर ले जाते हैं। इस क्रिया को 45 मिनट लगते हैं। इस क्रिया में रक्त स्राव नहीं होता है। मृत देह किसी प्रकार से कुरुप भी नहीं होता। दाता और लाभार्थी की त्वचा की अनुरूपता (Matching) की भी आवश्यकता नहीं होती है। संसर्गजन्य रुग्ण और त्वचारोगी त्वचादान नहीं कर सकते।

भारत में जल कर मरने वालों में 70% महिलाएं होती हैं। आयु के दृष्टिकोण से देखें तो 50% लोग 15 से 35 वर्ष की आयु के होते हैं।

त्वचादान के लिये अपने निकट के बड़े शहर के किसी रुग्णालय से संपर्क करें।

ओ३म शान्ति।

416, शनीवार पेठ,
इलिना अपार्ट., पुणे–411 030 (महा.)

☞ पृष्ठ 5 का शेष

यह वही भारत....

16 दिसम्बर, 2012 रात को अपने मित्र के साथ फिल्म देखकर निकली पैरा मैडिकल की छात्रा के साथ चलती बस में सामूहिक बलात्कार के चलते समूचे देश में रोष और क्षोभ की लहर दौड़ गई थी। बलात्कार ने पहली बार सारे देश को हिला दिया। दिल्ली में हुआ वाक्या किसी के भी रोंगटे खड़े कर देना वाला है। युवती को चार्टर्ड बस में अपनी हवस का शिकार बनाने के लिये डेढ़ घंटे तक आधा दर्जन शराब के नशे में युवक वह सब करते रहे जो भारतीय संस्कृति और सभ्यता को ही नहीं मानवता को भी कलंकित कर रही थी। दुष्कर्म के बाद दुष्कर्मियों ने पीड़िता और उसके मित्र को निर्वस्त्र कर चलती बस से बाहर सड़क पर फेंक दिया था। पुलिस को वहाँ पहुंचने तक 70–80 तमाशबीन वहाँ जमा हो गये थे किन्तु किसी ने भी उसके निर्वस्त्र तन पर कपड़ा ढ़कने तक की मानवीयता नहीं दिखाई। वह इतनी बीमार हो चुकी थी कि वह अस्पताल में जिंदगी और मौत से जूझ रही थी और वह बच भी जाती तो उसके अनेक अंग जिंदगी भर ठीक ढंग से काम नहीं कर पाती। आखिर में एक पखवाड़ा से मौत से जूझने के बाद 29 दिसम्बर तड़के सिंगापुर में आखिरकार दम तोड़ दिया।

अब जब दिल्ली ही नहीं बल्कि गांव से शहर, शहर में संसद तक दिल्ली की बिगड़ती कानून व्यवस्था पर एकमत से आवाज उठी है। (इन बलात्कारियों को आजीवन कारावास अथवा फाँसी ही होनी चाहिये।)

आर्यन्याय में बताया गया है कि बलात्कारी (पापी) को लोहे के गर्म तपे हुए लाल पलंग पर लेटाकर बहुत सारे पुरुषों के सम्मुख भस्म करें। यदि ऐसा हो जाए और टी.वी. चैनलों पर इसका प्रसारण किया जाए तो अतिशीघ्र ही ये घटनाएं लुप्त हो जाएंगी। लोगों के चरित्र को उच्च बनाने में टी.वी. बहुत बड़ी भूमिका निभा सकता है।

चौथा– आज देश के सभी राज्यों में अराजकता फैल रही है। भ्रष्टाचार के कारण ही कतिपय मंत्री एवं अफसर लोग सम्पत्तिशील बने हुए हैं और उसी के कारण महंगाई तथा महंगाई के द्वारा ही गरीबों की गरीबी में सुधार नहीं हो पा रहा है। इसके अलावा अनेकता के कारण दलों में विवाद बढ़ रहा है। खाद्यान्न में मिलाबट भी भ्रष्टाचार का ही एक रूप है जिससे अनेक प्रकार के रोग हो रहे हैं, वायु, जल प्रदूषण से गन्दगी भी बढ़ रही है जिनका शोधन नहीं हो पा रहा है। आज से 60 वर्ष पहले गन्दे नर्दमा में 'डी.डी.टी' पाऊडर का मच्छरों को मारने के लिये स्वास्थ्य विभाग की तरफ से छिड़काव होता था, वह बन्द हो गया और मलेरिया आदि जैसे रोग बढ़ने लगा। फलों और सब्जियों का पेहले स्वाद प्राकृतिक स्वादिष्ट होता था, किन्तु जब उनके कृतिम उपायों से फलन हाइबिड अस्वाभाविक होने से आलू का स्वाद कन्द जैसा हो गया है, मनुष्य उसी विषाणुयुक्त फलन का भोजनकर रहे हैं जिससे उदर में गैस आदि की बीमारी प्रायः लोगों को होने लगी है। इस प्रकार कृत्रिम उपायों द्वारा फलन को बढ़ाया जा रहा है। सरकार को चाहिए कि प्रजा को स्वस्थ रखने के लिये उन सबका उत्पादन कराने में गोबर आदि स्वाद का ही प्रयोग करावें। भ्रष्टाचार रहित मंत्री को चाहिए कि महंगाई और गरीबी को रोकने के लिये देश से 'जन लोकपाल' कानून द्वारा भ्रष्टाचार (रिश्वत) को दूर करें और जिन बड़े–बड़े अफसरों एवं कतिपय मंत्रियों के पास देश–विदेशों में काले धन जमा हैं उन्हें निकालकर देश हित में जनता की भलाई में खर्च करें। अतः जिस तरीक से हो, जनता सुख शान्ति से रह सके, वह उपाय करें।

मु.पो. मुराइई, जिला–वीरभूम
(पं. बंगाल) 731219

अंग्रेज़ी के कारण हिन्दी तथा भारतीय भाषाओं की भारी उपेक्षा

● प्रो. चन्द्र प्रकाश आर्य

भारत 1947 में स्वतंत्र हुआ और 1950 में इसका संविधान बना। संविधान में हिन्दी को राजभाषा का स्थान दिया गया था। तब से लेकर आज तक हिंदी को राजभाषा/राष्ट्रभाषा बनाने का प्रयास जारी है, किन्तु हम इसमें अभी तक सफल नहीं हो पाए हैं। सरकारी कामकाज तथा प्रशासन से लेकर निजी क्षेत्रों में अंग्रेजी का बाहुल्य है। उच्चतर शिक्षा, विज्ञान, तकनीकी प्रबंधन, चिकित्सा, इंजीनियरी तथा प्रौद्योगिकी आदि क्षेत्रों में अंग्रेजी का वर्चस्व है। यद्यपि देश की समस्त सामाजिक तथा धार्मिक एवं राजनीतिक गतिविधियां हिंदी एवं भारतीय भाषाओं में संचालित होती हैं फिर भी देश पर अंग्रेजी हावी है।

प्रतिवर्ष देश में विभिन्न संस्थाओं तथा संगठनों द्वारा हिंदी के उपलक्ष्य में अनेक आयोजन किए जाते हैं। उनमें मुख्य मुद्दा यही होता है कि हिंदी को राजभाषा के रूप में विभिन्न क्षेत्रों में लागू किया जाए। सितम्बर के दूसरे पखवाड़े से लेकर अक्टूबर के प्रथम पखवाड़े तक हिंदी दिवस, हिंदी सप्ताह, हिंदी पखवाड़ा, हिंदी मास नाए जाते हैं। उनमें यही चर्चा होती है कि हिंदी का अधिकाधिक प्रयोग कैसे किया जाए? समाचार पत्रों में भी इन दिनों यही चर्चा होती है। हिंदी साहित्य सम्मेलन प्रयाग/इलाहाबाद द्वारा भी पिछले कई वर्षों से यही मुद्दा उठाया जा रहा है। सम्मेलन द्वारा 13–14 सितम्बर 2004 को जम्मू में हिंदी दिवस समारोह का आयोजन किया गया। इसी प्रकार 2007 तक सम्मेलन द्वारा आयोजित विभिन्न गोष्ठियों, समारोहों तथा वार्षिक सम्मेलनों में यही मुद्दा उठाया जाता है। सम्मेलन द्वारा 23–24 जून 2007 को कटक (उड़ीसा) में सम्पन्न राजभाषा परिषद् में भी वर्तमान में हिन्दी की स्थिति पर विचार किया गया। राजभाषा संघर्ष समिति (रजि.) दिल्ली–85 द्वारा अप्रैल/मई, 2005 में देश के भिन्न–भिन्न भागों में हिन्दी निबंध एवं भाषण प्रतियोगिताओं को आयोजन किया गया। इसमें लगभग 3000 छात्र–छात्राओं ने भाग लिया। जिसका पारितोषिक वितरण समारोह 31 जुलाई, 2005 को हिंदी भवन (नई दिल्ली) में सम्पन्न हुआ। इन प्रतियोगिताओं में विषय थे:– (1) काश! हम कॉलेजों में भी विज्ञान और तकनीकी शिक्षा हिंदी में प्राप्त करते। (2) वोट मांगें हिन्दी में, संसद में बोलें अंग्रेजी में (3) जनता की सरकार जनता से जनता की भाषा में व्यवहार करें, विदेशी भाषा में नहीं (4) अपनी भाषाओं के व्यवहार से ही देश विकसित होते हैं (5) सब बच्चों को पहली कक्षा से ही अंग्रेजी की पढ़ाई कितनी सार्थक? बात वहीं घूम–फिरकर हिंदी तथा भारतीय भाषाएं बनाम अंग्रेजी पर आती है, आखिर ऐसा क्यों? सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, नई दिल्ली की 23 जुलाई तथा 14 सितम्बर, 2006 की हिन्दी विषयक बैठकों में भी यही मुद्दा था कि हिंदी तथा भारतीय भाषाओं को प्रतिष्ठा कैसे दिलाई जाए? 14 सितम्बर, 2007 को राजभाषा संघर्ष समिति (रजि.) दिल्ली तथा आर्य प्रतिनिधि सभा राजस्थान द्वारा जयपुर में आयोजित हिंदी दिवस समारोह के अवसर पर यही बात मुख्य रही कि सरकार तथा प्रशासन में हिंदी एवं भारतीय भाषाओं के उचित स्थान दिलाने के लिए आंदोलन करना होगा। 2008 में भी यही आवाजें उठीं। साहित्य मंडल नाथ द्वारा (राज.) ने "हिन्दी लाओ देश बचाओ" का आहवान् किया, किन्तु स्थिति वही है।

इसका कारण है कि अंग्रेजी का वर्चस्व। सरकार, प्रशासन, राजकाज, चिकित्सा, प्रबंधन, सूचना तकनीकी, विधि, न्याय आदि महत्वपूर्ण क्षेत्रों में अंग्रेजी का वर्चस्व जारी है। केन्द्रीय सरकार के कामकाज की भाषा अधिकतर अंग्रेजी है। गृह मंत्रालय, प्रधानमंत्री कार्यालय में अंग्रेजी का बोलबाला है। प्रधानमंत्री ज्यादार अंग्रेजी में बोलते हैं। केन्द्रीय सचिवालय में बराबर अंग्रेजी जारी है। संघ लोक सेवा आयोग तथा अन्य अखिल भारतीय परीक्षाओं में अंग्रेजी का शिकंजा कम नहीं हुआ है। हिंदी तथा भारतीय भाषाओं की घोर उपेक्षा हो रही है, जबकि उसके जानने वाले पूरे देश के लोग हैं। एक ओर देश की 100 करोड़ से ऊपर जनता है तथा दूसरी ओर अंग्रेजी, जिसके जानने वाले 1 प्रतिशत भी नहीं हैं। अंग्रेजी देश के किसी प्रांत, जिले तथा गांव की भाषा नहीं फिर भी देश पर हावी है।

छठा विश्व हिंदी सम्मेलन (14–18 सितम्बर, 1999) लंदन में हुआ। सातवां विश्व हिन्दी सम्मेलन सूरीनाम (लेटिन अमेरिका) में 5 जून, 2003 को हुआ। यह चार–पांच दिन चला। हमारे प्रतिनिधि तथा भारत सरकार के अधिकारी भी वहां गए तथा वहां जाकर हिंदी को विश्वभाषा/राष्ट्रसंघ की भाषा के रूप में मान्यता दिलाने की बात की। सातवां विश्व हिन्दी सम्मेलन जुलाई 2007 में स्वयं संयुक्त राष्ट्रसंघ के मुख्यालय न्यूयॉर्क में हुआ। वहां भी भारत सरकार के प्रतिनिधियों द्वारा यह बात दोहराई गई कि हिन्दी को संयुक्त राष्ट्रसंघ की एक भाषा बनवाने के लिए भारत सरकार पूरा प्रयास करेगी। किन्तु अपने ही देश में सरकार तथा प्रशासन राजकाज में हिंदी को उचित स्थान देने को तैयार नहीं।

किंतु अपने ही देश में, राजकाज एवं प्रशासन में हम हिन्दी, भारतीय भाषाओं को उचित स्थान देने को तैयार नहीं हैं। हिंदी राजभाषा होते हुए भी अपने ही देश में पराई हो रही है। आज कम्प्यूटर तथा इंटरनेट पर हिंदी एवं भारतीय भाषाओं की भारी उपेक्षा हो रही है। इसका कारण है अंग्रेजी। अंग्रेजी के कारण हिन्दी तथा भारतीय भाषाओं का विकास रुक गया है। अंग्रेजी के कारण हम साहित्य, विज्ञान तथा चिकित्सा आदि क्षेत्रों में कोई मौलिक कार्य नहीं कर पाए हैं। अब तक कितने साहित्यकार हमने अंग्रेजी में पैदा किए हैं? मुल्ख्राज आनंद, आर.के.नारायण आदि दो–चार ही मिलेंगे जबकि अंग्रेजी पिछले 200 वर्षों से देश में निरंतर जारी है? कितने वैज्ञानिक हमने अंग्रेजी में पैदा किए हैं? सी.वी.रमन के बाद कितने नोबेल पुरस्कार हमने विज्ञान में प्राप्त किए हैं? इतनी बड़ी जनसंख्या वाले राष्ट्र के लिए क्या यह चिंता का विषय नहीं है? मौलिक लेखन एवं अनुसंधान अपनी भाषाओं तथा राष्ट्रभाषा में होता है, किसी विदेशी या बाहर की भाषा में नहीं। क्या रूस में, चीन में, अथवा फ्रांस में मौलिक/साहित्य लेखन एवं अनुसंधान अंग्रेजी में होता है? अंग्रेजी से हमारी अपनी भाषाओं का, भारतीय भाषाओं का विकास नहीं हो सकता। भारतीय भाषाएं एवं हिन्दी इस अंग्रेजी की राजनीति का शिकार हो गई है।

अंग्रेजी के कारण देश की जनता एक–दूसरे से कट गई है क्योंकि देश की अधिकांश जनता, 95 फीसदी लोग अंग्रेजी नहीं जानते। समाचारपत्र जनसंपर्क का महत्त्वपूर्ण साधन हैं। कितने अंग्रेजी के अखबार देश के विभिन्न भागों में पढ़े जाते हैं? दिल्ली से ही अंग्रेजी के कई अखबार प्रकाशित होते हैं किन्तु उनके पाठकों की संख्या सीमित है। अंग्रेजी के पत्र बड़े शहरों/नगरों तथा महानगरों तक सीमित हैं। उनके पाठकों की संख्या वही है जो 15–20 वर्ष पहले थी। नगरों, उपनगरों, तहसीलों, कस्बों तथा देहातों में कितने अंग्रेजी समाचार पत्र पढ़े जाते हैं? उत्तर नहीं में मिलेगा। अंग्रेजी के समाचार–पत्रों के ऊपर चंडीगढ़, दिल्ली कलकत्ता, बंबई, हैदराबाद, विजयवाड़ा, बंगलौर, मद्रास, मदुरई, कोयम्बटूर, कोचीन, त्रिवेंद्रम आदि नगरों का नाम लिखा होता है। "दि हिंदू"–इण्डियन एक्सप्रैस आदि इसके उदाहरण हैं, जबकि देश का कोई ऐसा भाग नहीं है जहां हिन्दी के पाठक न हों? हिंदी का पत्र प्रकाशित न होता हो? देश के विभिन्न भागों से छपने वाले अकेले हिंदी पत्रों/समाचार–पत्रों पत्रिकाओं की संख्या अधिक है। फिर अन्य भारतीय भाषाओं/प्रादेशिक भाषाओं के पत्रों की संख्या अलग है। क्या ऐसा अंग्रेजी तथा अंग्रेजी समाचारपत्रों के बारे में कहा जा सकता है? फिर भी देश पर अंग्रेजी हावी है। अंग्रेजी के कारण हिंदी तथा भारतीय भाषाएं आपस में भिड़ गई हैं। हिंदी के साथ–साथ तमिल, तेलुगु, कन्नड़ आदि भाषाओं की भी अपेक्षा हो रही है। हिंदी विरोध के कारण अंग्रेजी की बन आई है तथा दक्षिण की भाषाएं भी आपस में टकरा गई हैं।

हिन्दी विरोध के नाम पर जिन अहिंदी भाषी, खासकर दक्षिणी प्रांतों की दुहाई दी जाती है, वहां कितने लोग अंग्रेजी बोलते हैं? कितनी अंग्रेजी फिल्में दक्षिण में तैयार होती हैं? यहां तक कि मद्रास/चेन्नई में भी अधिकतर फिल्में हिंदी में तैयार होती हैं। उसके बाद दक्षिण भारत की अपनी भाषाओं की फिल्में बनती हैं– अंग्रेजी में फिल्मों का कहीं नाम भी नहीं? भारत नाट्यम अंग्रेजी का नहीं है। कर्नाटक संगीत अंग्रेजी में नहीं है। वहां का साहित्य तमिल, तेलुगु, मलयालम तथा कन्नड़ में लिखा जाता है, अंग्रेजी में नहीं। फिर क्यों दक्षिण को अंग्रेजी के साथ जोड़ा जा रहा है? अंग्रेजी का, उत्तर हो अथवा दक्षिण, देश की सांस्कृतिक एवं भाषायी परंपराओं से कोई संबंध नहीं है। कुछ प्रतिशत लोगों की भाषा से भारतीय भाषाओं की भारी क्षति हुई है। इसके लिए देश के राजनेता, जनप्रतिनिधि, राज्य सरकारें तथा केन्द्र सरकार जिम्मेदार है। यद्यपि संविधान में 1950 के बाद 15 वर्ष के लिए 1965 तक अंग्रेजी को जारी रखने का

शेष पृष्ठ 11 पर ☞

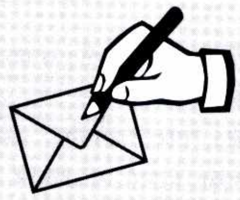

पत्र/कविता

उद्देश्य एक ही लेकिन मंच, तीन

साप्ताहिक 'आर्यजगत्' 31मार्च से 06 अप्रैल 2013 का अंक पढ़ा, टंकारा में आयोजित ऋषिबोध पर पूनम जी का भेजा संदेश पढ़ा। आर्यजगत् की आंखे खोलने वाला संदेश है। आप का कहना है कि उनका मन रो उठता है अपने ही आर्यसमाज के मंच को देखते हुए। भारत में एक उद्देश्य की ओर बढ़ने वाले दो मंच हैं। कौन सही है कौन गलत है? कोई भी नहीं पर स्वार्थ, ईर्ष्या, द्वेष जैसे कीटाणुओं से ग्रसित हैं। आर्य जगत् के लिए शर्म की बात तो है ही। यह भारत की बात है। यहाँ हमारे टापू मोरिशिस भी उन्हीं कीटाणुओं द्वारा घायल है। आर्य समाज की तीन संस्थाएं हैं। एक तो पहले से ही सही दिशा की ओर जा रहा है। पर वो और हैं जो अन्धे बनकर रेवड़ी अपने को ही बांट रहे हैं। जोश, हिम्मत और नारा लगाते आगे बढ रहे हैं। अपनी दशा का, आर्य समाज की दशा, का महर्षि दयानन्द की दशा का ख्याल नहीं कर रहे हैं। अपने जन्मना जाति भाहियों को जुटाकर आगे बढ़ रहे हैं वे कहते हैं मगन नहीं पीछे हट रहे हैं। उनकी दिशा एक नहीं है। भटकी दिशा के यात्री है। हां एक वात तो अवश्य है। जब कोई पांचवा आदमी कंधों पर होता है तब एक दिशा में अवश्य जाते हैं (मुर्दे को लेकर)। धार्मिक मंच पर ही अपने पराये की आंख खोलते हैं। वैसे तो सभी सार्वजनिक व्यवहार बराबर सभी से मिलकर करते हैं। धार्मिक मंच पर आकर लड़खड़ा जाते हैं। यहां पर पूनम जी के समान आमन्त्रण पर नहीं जाना वे नहीं जानते। उनको खुश करने के लिए चले जाते हैं। मगर मन की दूरी दूर नहीं होती है। जमाने को दिखाने के लिए दूसरे चेहरे के साथ आते जाते हैं। जब आर्य जगत् का यह हाल है तो अन्धकार में घिरे लोगों की हालत कैसी होगी, कितने दयानन्द को बुलाना पड़ेगा?

सोनालाल नेमधारी
कारोलिन बेल एयर
मोरिशस

****

'श्रुति पथिक विजय'

वैदिक पथ पर बढ़ो अभय हो।
श्रुति पथिक विजय पथ जय–जय हो।।

श्रुति शब्द सुमंगल मणि लड़ियाँ। काटती मनुज की हथकड़ियाँ।
श्रुतिभा से जगमग मणि आभा, बिखराती सुरभित पंखुड़ियाँ।
सम्मुख अनुपम अरुणोदय हो। श्रुति पथिक विजय पथ जय जय हो ।।

यह वेद तेज प्रिय प्रभुवर का। अक्षर अक्षर कुन्दन कणिका।
नर जीवन करती शिवस्वरूप, मृदु मन्त्रों की माला मणिका।
कण कण अवगुण क्षण–क्षण क्षय हो। श्रुति पथिक विजय पथ जय जय हो ।।

वैदिक पथ नित्य नगीना है। पग पग मोहक मणि मीना है।
यह धार सुधारों की देता, दृढ़ सीना सुरभि पसीना है।
प्रण पालन श्रम कान्ति उभय हो। श्रुति पथिक विजय पथ जय जय हो।।

तन तेजवान हो वीर्यवान। मन होता ध्रुव सा धैर्यवान।
व्यक्तित्व प्रफुल्लित उमगाता, अस्मिता कीर्ति स्थैर्यवान।
ललित कलित लावण्य निलय हो। श्रुति पथिक विजय पथ जय जय हो।।

अरि रहित बृहस्पति परमेश्वर। श्रुति शत्रु विनाशक उसके स्वर।
वेद नीति की रीति प्रीति से, तू अपने शत्रु पराजित कर।
योग कर्म कौशल्य विनय हो। श्रुति पथिक विजय पथ जय जय हो।।

देवातिथि
अलीगढ़ (उ.प्र.)

हम बीमार क्यों होते हैं

आपने देखा होगा कि हस्पतालों में मरीजों की लाइनें लगी रहती हैं। कभी आपने सोचा है कि ये बीमारियां क्यों आती हैं? आयुर्वेद के अनुसार जब हम आहार–विहार में कुपथ्य करते हैं तब रोग में फंस जाते हैं। यह पूर्ण सत्य है। जब मन और और इन्द्रियों के वशीभूत होकर गलत काम करोगे तो बीमारी आएगी।। नोट करो – स्वास्थ्यरुपी भवन के तीन स्तम्भ हैं।

1. आहार (भोजन) 2. निद्रा 3. ब्रह्मचर्य

यदि स्वस्थ रहना चाहते हो तो इन तीन स्तम्भों को सुन्दर सुदृढ़ बना कर रखो। शुद्ध सात्त्विक भोजन करो। मांस, मछली, अण्डा मनुष्य का भोजन नहीं है। इनके खाने से बुद्धि भ्रष्ट होती है। और शरीर में अनेक प्रकार के भयंकर रोग लग जाते हैं। शाकाहारी भोजन ही लाभदायक हितकर है। सच पूछो तो दूषित भोजन के कारण ही भ्रष्टाचार फैला रहा है। क्योंकि जैसा आहार होगा वैसा ही मन में विचार होगा। विचारों जैसा ही व्यवहार होगा। विस्तार से बचने के लिए सारांश में लिखा है। अपना भोजन सुधारो। मन लगाकर परिश्रम करो और पूरा आराम करो। संयम से जीवन यापन करो।

देवराज आर्यमित्र
नई दिल्ली – 64

****

भामाशाह की 466वीं जयन्ती पर

आपका जन्म अलवर में हुआ था। अपने पिता की तरह आप भी महाराणा प्रताप परिवार के लिए समर्पित थे। आप जैन धर्म के अनुयायी थे और परम देशभक्त तथा अद्भुत दानी थे। आप व्यापार करते थे। आपके पास स्वयं का तथा पुरखों का कमाया हुआ अपार धन था।

उन्होंने यह सब महाराणा प्रताप के चरणों में अर्पित कर दिया। इतिहासकारों के अनुसार भामाशाह जैन ने 25 लाख रुपए (इस समय यह रकम कई अरब बैठेगी) तथा 20,000 अशर्फियां महाराणा प्रताप को दीं।

महाराणा प्रताप ने आंखों में आंसू भरकर भामाशाह जैन को गले से लगा लिया। भामा शाह जैन से प्राप्त धन से महाराणा प्रताप ने सेना को संगठित करके अपने क्षेत्र को मुक्त करा लिया। परम देशभक्त भामाशाह जैन ने अकबर के दरबार में मनचाहा पद लेने का प्रस्ताव ठुकरा दिया।

अपनी मृत्यु से पूर्व भामाशाह जैन ने अपने पुत्र को आदेश दिया कि वह महाराणा प्रताप के पुत्र के साथ वैसा ही व्यवहार करे जैसा उन्होंने महाराणा प्रताप के साथ किया है। भामाशाह जैन दानवीर पुरस्कार'' आरम्भ किया था और दो सज्जनों को यह पुरस्कार दिया गया था इस वर्ष भी इनकी जयन्ती पर यह पुरस्कार एक या दो दानवीरों को दिया जाएगा।

राम अवतार यादव, मो 9837153026
चांदपुर रोड, बुलन्दशहर

****

☞ पृष्ठ 9 का शेष

अंग्रेज़ी के कारण हिन्दी ...

प्रावधान किया गया था किंतु राजभाषा अधिनियम, 1963, राजभाषा विधेयक 1967 तथा राजभाषा अधिनियम 1976 द्वारा संविधान में संशोधन करके अनिश्चितकाल के लिए अंग्रेजी को जारी रखने की छूट दे दी गई। यह सब कांग्रेस के शासन काल में हुआ। अन्य राजनीतिक दल भी जिम्मेवार हैं।

इसी कारण आज केन्द्र सरकार के कार्यालयों में, केंद्र सरकार के कामकाज में अंग्रेजी का प्रभुत्व है और इसका प्रयोग जारी है। केन्द्र और राज्य सरकारों में आपसी संपर्क, पत्राचार अधिकतर अंग्रेजी में ही होता है। केन्द्र सरकार के अतिरिक्त नागालैंड, केरल, तमिलनाडु, आंध्र, कर्नाटक, बंगाल, त्रिपुरा, मिजोरम आदि में अंग्रेजी का ही एकाधिकार है। हिंदी भाषी राज्यों में भी अंग्रेजी का प्रयोग बढ़ता जा रहा है। स्थिति यहां तक पहुंच गई है कि दिल्ली, पंजाब, बंगाल, बिहार, हरियाणा, महाराष्ट्र आदि प्रांतों में पहली या प्राथमिक कक्षा से ही अंग्रेजी लागू करने के कारण देश में शैक्षिक, सामाजिक एवं आर्थिक स्तर पर भारी असमानता आ गई है। उच्च शिक्षा, मैडिकल, इंजीनियरी प्रबंधन आदि व्यावसायिक शिक्षा, प्रौद्योगिकी एवं तकनीकी शिक्षा तथा इनसे संबद्ध नौकरियों पर अंग्रेजी जानने वालों का ही वर्चस्व है। देश की आम जनता की, साधारण छात्रों की यहां तक पहुंच नहीं। उधर अखिल भारतीय सेवाओं तथा अन्य नौकरियों पर अंग्रेजी जानने वालों का ही शिकंजा है। हिन्दी तथा भारतीय भाषाओं को जानने वालों की कोई पूछ नहीं है। उनका प्रतिशत बहुत कम है। वे अपने ही देश में पराये हो गये हैं। हाल ही में संघलोक सेवा आयोग की सिविल सेवा की प्रारम्भिक परीक्षाओं (2011) के पाठ्यक्रम में अंग्रेजी को अनिवार्य कर दिया गया है। इससे गांवों, कस्बों और छोटे नगरों में रहने वाले गरीब और पिछड़े वर्ग के प्रतिभाशाली छात्र पहले ही चरण में, प्रारंभिक परीक्षाओं में ही सिविल सेवाओं से बाहर हो जाएंगे? दैनिक जागरण "20/5/11 पी.8 (अंग्रेजी के जरिए अन्याय) ''आर्यजगत" नई दिल्ली, 19 मार्च 2011 पृ. 7, पृ. 8 हिन्दी के विरुद्ध नया षडयन्त्र)।

कहने को तो हम स्वतंत्र हैं किन्तु आजादी के इतने वर्ष बाद भी भाषाई दासता के शिकार हैं। भाषा के रूप में अंग्रेजी से कोई विरोध नहीं किन्तु सवाल तो राष्ट्र की अस्मिता का है, भारतीय भाषाओं एवं राजभाषा हिंदी की प्रतिष्ठा का है, देश की सौ करोड़ से ऊपर जनता का है? कब तक देश की कोटि–कोटि जनता पर अंग्रेजों को लादे रहेंगे? देश के राजनेताओं, शासकों, केन्द्र सरकार तथा राज्य सरकारों को शीघ्र इस ओर ध्यान देना चाहिए। ऐसा भाषाई संकट किसी अन्य देश में नहीं है। प्रधानमंत्री जी तथा भारत सरकार एवं विभिन्न राजनीतिक दलों को इसका शीघ्र समाधान करना होगा। केन्द्र की कांग्रेस – नीत, यू.पी.ए. सरकार को इस बारे में पहल करनी चाहिए।

432/8, आर्य निवास,
करनाल–132001 (हरियाणा)

☞ पृष्ठ 6 का शेष

ऋग्वेद में सृष्टि उत्पत्ति...

देता है। द्युलोक और पृथ्वी अन्तरिक्ष तथा अन्य प्रकाशमान पिण्डों को भी वही बनाता है। सृष्टि नियमानुसार बनी है और प्राकृतिक नियमों के अनुसार ही उसका संचालन हो रहा है। सृष्टि उत्पत्ति के बाद परमात्मा उसके नियमित कार्य के लिए उसे स्वतंत्र कर देते हैं।

ऋतस्य हि प्रसिति र्घौरु रु व्यर्चोनमो मह्यरमान्तः पनीयसी ।

इन्द्रो मित्रो वरुणः सं चिकित्रिरेऽथो भगः सविता पूतरथसः। ऋ. 10.92.4

सृष्टि के शाश्वत नियम का विस्तार निश्चय द्युलोक, महान् अन्तरिक्ष पर्यन्त हित प्रशस्यतम पृथ्वी अग्नि का प्रकाश है। विद्युत, प्राण, उदान, वायु तथा सूर्य आदि शुद्ध पवित्र बलवाले इस नियम का ज्ञान कराते हैं। विज्ञान का मानना यह है कि सृष्टि की सीमा असीम है तथा निरन्तर सृजन के नियम के अनुसार आकाश में सृजन की क्रिया निरन्तर चलती रहती है। वेद इसका समर्थन करता है।

पवमानस्य विश्ववित्म ते सर्गा असृक्षत्। सूर्यस्येवन रश्मयः। ऋ. 9.64.7

परमात्मा के रचित कोटि–कोटि ब्रह्माण्ड सूर्य की रश्मियों के समान देदीप्यमान हो रहे हैं।

वैज्ञानिक मान्यता यह है कि आकाश में कोई भी पिण्ड स्थिर नहीं रह सकता है। सभी पिण्ड लगातार गति में रहते हैं।

प्र मुष विम्यो मरुतो विरस्तु प्रश्येनः शेनेभ्यः आशुपत्वा।

अचक्रया यत्स्वधया सुपर्णो हव्यं भरन्मनवे देवजुष्टम्। ऋ. 4.26.4

इस मंत्र में वाचकलुप्तोपमालंकार है। इस सृष्टि और अन्तरिक्ष में जैसे पक्षी आकाश में जाकर आते हैं वैसे ही सब लोक और लोकान्तर घूमते हैं। सम्पूर्ण संसार गुरुत्वा कर्षण के कारण ही अपनी स्थिति बनाये हुए, है इसे भी ऋग्वेद में इस प्रकार बताया गया है–

आकृष्णेन रजसा वर्तमानो निवेशयन्नमृतं मर्त्य च।

हिरण्ययेन सविता रथेना देवो याति भुवनानिपश्यन्। ऋ1.35.2

पदार्थः– यह (आकृष्णेन) अपने आकर्षण के द्वारा (रजसा) लोक समूह के साथ (सविता) सबका प्रेरक सूर्य हम सबको कर्मों में प्रेरित करता है। यह सवित्रा देव (अमृतम्) न मरने देने वाली प्राण शक्ति को (च) तथा (मर्त्यम्) मरण धर्मा शरीर को (निवेशयन्) अपने अपने स्थान में नियत करता हुआ स्वस्थ करता है। यह (सविता देवः) प्राण शक्ति को देने वाला सूर्य (हिरण्ययेन रथेन) अपने ज्योतिर्मय रथ से (भुवनानि पश्यन्) सब प्राणियों को ध्यान करता हुआ (याति) गति कर रहा है। सूर्य का यह रथ सब का हितकारी है। सूर्य प्रजाओं का प्राण ही है। ताप के द्वारा सृष्टि उत्पति के विषय में तो कई मन्त्र हैं।

ब्रह्मणस्पति रेता सं कर्मारयव धमत् देवानां पूर्व्ययुगेऽसत–सदजायत। ऋ. 10.7.22

ब्रह्माण्ड एवं प्रकृति के स्वामी परमेश्वर ने दिव्य पदार्थों के कणों को लोहार की तरह ताप से तप्त किया है। इन दिव्य पदार्थों के कणों द्वारा सृष्टि की प्राक्वस्था में अव्यक्त प्रकृति से व्यक्त सृष्टि उत्पन्न होती है।

ऋ. 8.63.6 में बताया गया है कि सृष्टि की रचना पूर्व में हो चुकी है और कितने ही लोक लोकान्तर भविष्य में बनने वाले हैं। सृष्टि की आयु कितनी है? इसका ज्ञान तो दैनिक संकल्प मन्त्र से ही प्राप्त हो जाता है। इसके अनुसार वर्तमान में सातवें मन्वन्तर की अट्ठाईसवीं चतुर्युगी का कलियुग चल रहा है। इस चतुर्युगी में कलियुग के वि.स. 2069 में 5112 वर्ष व्यतीत होकर 5113 वां वर्ष चल रहा है। कुल समय का मान इस तरह निकालना चाहिए–

6 मन्वन्तर का कुल समय =4320000 X 71X6 = 1840320000 वर्ष

27 चतुर्युगों का कुल समय =4320000 X 27 = 0116640000 वर्ष

अट्ठाईसवीं चतुर्युगी का सतयुग वर्ष = 0001728000 वर्ष

अट्ठाईसवीं चतुर्युगी का त्रेतायुग वर्ष = 0001296000 वर्ष

अट्ठाईसवीं चतुर्युगी का द्वापरयुग वर्ष = 0000864000 वर्ष

कलियुग का वर्तमान समय = 0000005113 वर्ष

कुल योग = 1960853113 वर्ष

इसके अतिरिक्त वेदानुसार सृष्टि के बनने में 6 चतुर्युगी का समय =4320000 X 6=25920000 वर्ष लगे हैं। इससे Big Bang होने का समय = 1960853113 + 25920000 वर्ष 1986773113 वर्ष पूर्व रहा है। वैज्ञानिकों की नवीनतम मान्यता कि सम्पूर्ण ससांर ऊर्जा का ही रूप है। इसे निम्न मन्त्र बता रहा है–

यस्मादिन्द्राद् वृहत विज्वने मृते विश्वान्यस्मिन संमृताधिवीर्या जठरे सोम

तन्वी सहोमहो हस्से वज्रं भरति शीर्षणि क्रुतुम्।

हे मनुष्यो। यह जगत् जिस बड़े विद्युत अग्नि (ऊर्जा) के अतिरिक्त कुछ भी नहीं है इसे जानने का प्रयत्न करो।

वेदों में आत्मा को अनादि माना गया है। डॉ. स्टीकनडबल्यू हाकिंग में अजीव से सजीव उत्पन्न होने की बात कही है परंतु अधिकांश वैज्ञानिकों का मत उसके विरोध में है। डॉ. मारलिन बुक्स प्रोफेसर जीवविज्ञान मेरीलैण्ड विश्वविद्यालय लिखते हैं पास्चर के समय से ही यह वैज्ञानिक तथ्य स्वीकार किया गया है कि किसी अजीव द्रव्य से जीवन की उत्पति नहीं हो सकती है।

योग्यतम की विजय से इतना तो पता चलता है कि कुछ परिवर्तन होता है परंतु उससे यह पता नहीं चलता कि कुछ प्राणियों एवं पौधों में इतनी किस्में, इतनी जातियां कैसे बन जाती हैं? अधिकांश वैज्ञानिक इस बात से सहमत हैं कि यदि सृष्टि की उत्पति हुई है तो उसका रचियता भी है और वह निराकार है। चूंकि अब यह सिद्ध हो गया है कि सृष्टि की रचना हुई है तो यह भी सिद्ध है कि उसका धाता ब्रह्म भी है। ऋग्वेद में ईश्वर, जीव और प्रकृति का आपसी सम्बन्ध भी निम्न मंत्र द्वारा बताया गया है।

द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया समानं वृक्षं परिषस्वजाते।

तयोरन्य पिप्पलंस्वाद्वत्यनश्नन्नन्यो अभिचाकशीति।

ऋ. 1.164.20

इस मन्त्र में रूपकालकांर है। जीव, परमात्मा और जगत् का कारण प्रकृति ये तीन पदार्थ अनादि और नित्य हैं। जीव और ईश्वर यथाक्रम से अल्प अनन्त चेतन विज्ञानवान् सदा विलक्षण, व्याप्य व्यापक भाव से संयुक्त और मित्र के समान वर्तमान हैं, वैसे ही जिस अव्यक्त परमाणु रूप कारण से कार्य रूप जगत् होता है, वह भी अनादि नित्य है। समस्त जीव पाप पुण्यात्मक कार्यों को करके उनके फलों को भोगते हैं और ईश्वर एक सब ओर से व्याप्त होता हुआ न्याय से पाप पुण्य का फल देने से न्यायाधीश के समान देखता है।

वेदों में सृष्टि को असीम माना गया है। ऋग्वेद में कहा गया है–

एते मृष्टा अमर्त्याःससृवांसोनशश्रमुः। इय क्षन्त.पथो रजः। ऋ. 9.22.4

बहुत से ऐसे नक्षत्र हैं जिनका प्रकाश उनके निर्माण काल से पृथ्वी की ओर चल रहा है परंतु वह अभी तक पृथ्वी तक नहीं पहुँच पाया है। इस छोटे से लेख से हम ज्ञान हो गया है कि वेद का ज्ञान विज्ञान के कितना अनुरुप है। इति।

73 शास्त्री नगर, कोटा (राज.)

Delhi Postal R. No. D.L. (ND)-11/6066/2012-14
अग्रिम अदायगी के बिना भेजने का लाइसैंस नं. U(C)-103/2012-14
POSTED AT N.D.P.S.O. ON 19-20/06/2013
रजिस्ट्रेशन नं. आर० एन० आई० 39/57

डी.ए.वी. बुढार में मनाया गया स्वामी दयानन्द जन्मोत्सव

नर्मदा के कलकल निनाद से ललित एवं सोन की उन्मत्त लहरों से पालित, मैकल पर्वत की रमणीय पहाड़ियों की तलहटी में विन्ध्यक्षेत्र के एकमात्र सह–आवासीय विद्यालय डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल बुढार ने स्वामी दयानन्द सरस्वती जी का 189 वाँ जन्मोत्सव अत्यन्त ही धूम–धाम से मनाया। प्रातः वेला में ऋषिगाथा का गायन तथा जय घोष करते हुए, लोगों को आर्यसमाज के प्रति जागृत करने के लिए प्रभात फेरी निकाली गई, तदनन्तर विद्यालय की प्राचार्या श्रीमती विजय लक्ष्मी नायडू ने उपस्थित छात्रों एवं शिक्षकों को स्वामी दयानन्द जी की त्याग भावना, सेवाभाव, देशप्रेम, वैदिक भावना एवं उनके आदर्शों के विषय में अवगत कराया तथा ओ३म् ध्वज को सदा समुन्नत रखने तथा सम्पूर्ण पृथ्वी को आर्यमय बनाने का आह्वान किया। कार्यक्रम की इसी श्रृखला में विद्यालय के चेयरमेन श्री सी.एल. सरावगी जी एवं विद्यालय की प्राचार्या श्रीमती विजय लक्ष्मीनायडू ने स्वामी दयानन्द जी के आदर्शों को अक्षुण्ण बनाये रखने की शपथ लेते हुए अग्नि देव को आहूति दी। कार्यक्रम के अन्त में उपस्थित सभी आर्यधर्मानुयायियों को प्रसाद स्वरूप मोदक वितरित किया गया।

डी.ए.वी. मलोट में लगा वैदिक चरित्र निर्माण शिविर

डी.ए.वी. एडवर्ड गंज सी. सै. पब्लिक स्कूल मलोट की आर्य युवा समाज शाखा द्वारा छह दिवसीय वैदिक चरित्र निर्माण शिविर का आयोजन किया गया जिसमें विद्यार्थियों को चरित्र निर्माण के साथ–साथ शारीरिक, आत्मिक व सामाजिक उन्नति के बारे में विशेष रूप से प्रोत्साहित किया गया।

इस वैदिक चरित्र निर्माण शिविर में लगभग 120 बच्चों ने भाग लिया। शिविर प्रतिदिन प्रातः 8 बजे से सांय 1.30 बजे तक नियमानुसार चलता रहा। इस शिविर में विद्यार्थियों को चार वर्गों में विभक्त किया गया, जिनके नाम स्वामी दयानन्द, स्वामी विवेकानन्द, महात्मा हंसराज व गुरु नानक देव रखे गये।

प्रतिदिन प्रातः शरीर को स्वस्थ रखने के लिए योगासन, प्राणायाम के साथ–साथ ध्यान का विशेष प्रशिक्षण दिया गया। उसके बाद प्रत्येक ग्रुप का हवन–यज्ञ करवाया गया। यजमान की भूमिका विभिन्न महानुभावों ने निभाई।

समय–समय पर प्राचार्य जी.सी. शर्मा, मुख्याध्यापिका अमर–जीत कौर मक्कड़, योगाचार्य रामचन्द्र शास्त्री व विभिन्न स्थानों से आए विद्वानों द्वारा धर्म, वर्ण व्यवस्था, आश्रम व्यवस्था, पंचमहायज्ञ,माता–पिता के प्रति हमारा कर्त्तव्य, ओ३म् व गायत्री मंत्र जाप के वैज्ञानिक गूढ़ रहस्य तथा आर्य महापुरुषों के जीवन से सम्बन्धित प्रेरक प्रसंग सुनाये गये। शिविर में पाक कला, संगीत, नृत्य, ड्राईंग, विभिन्न प्रकार की दौड़, व अग्रेज़ी भाषा से सम्बन्धित अनेक प्रतियोगिताएँ आयोजित की गईं। विभिन्न प्रतियोगिताओं में प्रथम, द्वितीय व तृतीय स्थान प्राप्त करने वाले विद्यार्थियों को स्मृति चिन्ह प्रदान कर प्रोत्साहित किया गया।

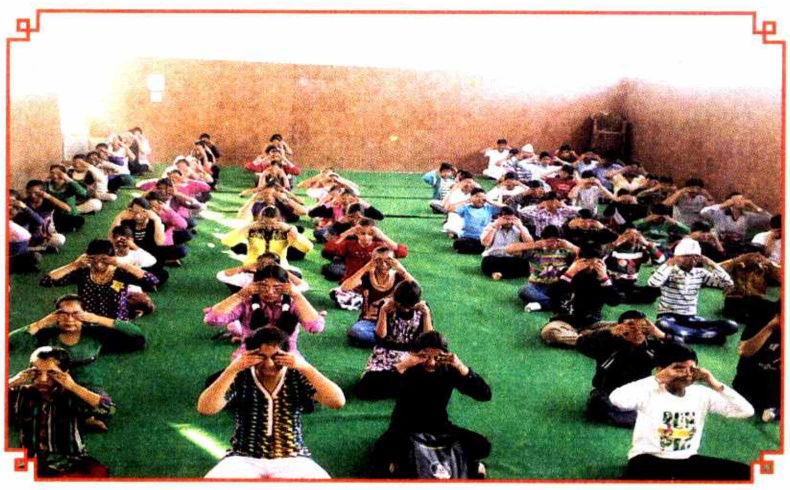

समापन समारोह पर श्री सुखमनि साहिब का पाठ हुआ। विद्यार्थियों की अच्छी शिक्षा की कामना की गई। प्राचार्य जी. सी.शर्मा जी द्वारा सभी का स्वागत किया गया। शिविर की छात्रा नन्दिनी ने शिविर की रिपोर्ट पढ़ी। इस अवसर पर शहर के अनेक गणमान्य नागरिक उपस्थित थे।

आर्य युवा समाज द्वारा 'जल व जैव विविधता' संरक्षण हेतु जागरूकता अभियान

विश्व जैव विविधता दिवस के उपलक्ष्य पर डी.ए.वी. विद्यालय नाहन के आर्य युवा समाज एवं पाइन ग्रो इको क्लब के तत्त्वावधान में एक जागरूकता कार्यक्रम का आयोजन किया गया। इस कार्यक्रम के अंतर्गत डी.ए.वी. विद्यालय के विद्यार्थी व अध्यापक प्रातः काल कालीस्थान तालाब और रानीताल के पास एकत्रित हुए। ततपश्चात् विद्यार्थियों ने रानीताल व कालीस्थान तालाब का घेराव कर के लागों को जल स्त्रोतों व जैव विविधता को बचाए रखने का आह्वान किया। इसके साथ–साथ पाइन ग्रो इको क्लब के सदस्यों द्वारा लोगों को जैव–विविधता एवं जल संरक्षण के प्रति जागरूक करने के लिए नारों का उद्घोष किया तथा पंपलैट बांटे गए। कार्यक्रम के अंत में प्रधानाचार्य श्री नरेश कटोच ने अपने सम्बोधन में विद्यार्थियों एवं अध्यापकों को जैव विविधता एवं जल संरक्षण के महत्व के बारे में विस्तारपूर्वक बताया तथा भविष्य में जल एवं जैव विविधता को बचाए रखने का आह्वान किया ताकि जनता के सहयोग द्वारा प्रकृति संरक्षण में आने वाली भयावह परिस्थितियों से बचा जा सके।

मुद्रक व प्रकाशक – **श्री प्रबोध महाजन,** सभा मंत्री द्वारा **मदन गोयल** के प्रबंध में **अरावली प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स (प्रा.) लि.,** डब्ल्यू–30, ओखला, फेस–II, नई दिल्ली–110020 (दूरभाष : 26388830–32) से मुद्रित कार्यालय **'आर्य जगत्'** आर्यसमाज भवन, मन्दिर मार्ग, नई दिल्ली–110001 से प्रकाशित। स्वामित्व – आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा, मन्दिर मार्ग, नई दिल्ली–110001 (दूरभाष : 23362110, 23360059) सम्पादक – **श्री पूनम सूरी**